कुरुक्षेत्र

जनवरी 2000

ग्रामीण विकास को समर्पित

मूल्य : सात रुपये

- परम्परा और बदलाव के बीच भारतीय गांव
- आधुनिक अर्थतंत्र में गांधी जी के विचारों की सार्थकता

आर्थिक सम्पादकों के सम्मेलन में ग्रामीण विकास मंत्री श्री सुन्दरलाल पटवा का भाषण

हर वर्ष नई दिल्ली में आर्थिक सम्पादकों का सम्मेलन आयोजित किया जाता है जिसमें विभिन्न आर्थिक मंत्रालयों के मंत्री अपने विचार रखते हैं। गत वर्ष यह सम्मेलन 17 से 19 नवम्बर 1999 तक आयोजित किया गया। इसका उद्घाटन वित्त मंत्री श्री यशवंत सिन्हा ने किया। ग्रामीण विकास मंत्री श्री सुन्दर लाल पटवा ने भी सम्मेलन में अपने विचार प्रस्तुत किए। प्रस्तुत हैं श्री पटवा के भाषण के कुछ अंश:

ग्रामीण विकास मंत्री ने कहा कि ग्रामीण विकास मंत्रालय ग्रामीण भारत में तेजी से विकास और सामाजिक–आर्थिक बदलाव लाने के लिए प्रयत्नशील है। ग्रामीण क्षेत्रों के गरीबों को रोजगार के अधिक अवसर, पेयजल, आवास, स्वच्छता, सड़कें, संक्षेप में सुखी जीवन की सभी बुनियादी सुविधाएं जुटाकर उनके जीवन–स्तर में सुधार लाने के प्रयास किए जा रहे हैं।

श्री सुन्दरलाल पटवा ने कहा कि अप्रैल 1999 से ग्रामीण विकास और गरीबी उन्मूलन के सभी प्रमुख कार्यक्रमों और योजनाओं के स्वरूप में बदलाव लाया गया है। इससे सरकार ग्रामीण क्षेत्र के गरीबों की जरूरतों की ओर ज्यादा ध्यान दे पा रही है। इस मंत्रालय के प्रमुख कार्यक्रमों का उल्लेख करते हुए श्री पटवा ने कहा कि गरीबी दूर करने के लिए स्वरोजगार कार्यक्रम बहुत महत्वपूर्ण हैं। इनसे लोगों की आमदनी बढ़ती है और गरीबी स्थायी तौर पर दूर होती है। इस वर्ष से सरकार ने स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना शुरू की है जिसमें स्वरोजगार की पहले की सभी योजनाओं को शामिल कर लिया गया है। इसमें ग्रामीण गरीबों के स्व–सहायता समूहों का गठन किया जाता है और उनका कौशल बढ़ाने, उनकी गतिविधियों की योजना तैयार करने, बुनियादी ढांचा खड़ा करने, टेक्नालाजी, ऋण और विपणन जैसे पहलुओं का ख्याल रखा जाता है। ग्रामीण विकास मंत्रालय ने नवम्बर 1999 में नई दिल्ली में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेले में 'सरस' नाम के एक मण्डप में 22 राज्यों के ग्रामीणों द्वारा स्वरोजगार कार्यक्रमों के तहत तैयार सामान को प्रदर्शित किया।

सुनिश्चित रोजगार कार्यक्रम के बारे में मंत्री महोदय ने कहा कि इस योजना को देश भर में जिला/ब्लाक स्तर पर लागू किया जाएगा। इस योजना के लिए निर्धारित धनराशि का 70 प्रतिशत ब्लाकों को दिया जाएगा और शेष 30 प्रतिशत धनराशि जिला स्तर के क्षेत्रों में खर्च की जाएगी। जिला परिषद् द्वारा उस क्षेत्र के सांसद से विचार–विमर्श करके कार्यों का चयन किया जाएगा।

श्री पटवा ने बताया कि सरकार आवास को मनुष्य की बुनियादी जरूरत मानती है और ग्रामीण गरीबों का विशेष ध्यान रखते हुए सभी को आवास की सुविधा उपलब्ध कराने के लिए वचनबद्ध है। उन्होंने कहा कि सरकार का हर वर्ष ग्रामीण क्षेत्रों में 13 लाख मकान बनाने का प्रयास है। इसके लिए सरकार ने एक कार्य–योजना तैयार की है जिसमें इन्दिरा आवास योजना के तहत मकानों की मरम्मत, ग्रामीण आवास के लिए ऋण और सब्सिडी योजना और ग्रामीण आवास के विकास के निर्मिति केन्द्र खोलना, हुडको को अधिक सहायता और समग्र आवास योजना शामिल है। श्री पटवा ने विश्वास व्यक्त किया कि इन कार्यक्रमों से सभी बेघरों को नौवीं योजना के अंत तक अपना मकान देने का और दसवीं योजना के अंत तक सभी कच्चे मकानों की मरम्मत करने का अपना लक्ष्य हम पूरा कर पाएंगे।

मंत्री महोदय ने कहा कि अगले पांच वर्षों में सरकार सभी को स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराना चाहती है। इसलिए पेयजल का एक नया विभाग बनाया गया। हालांकि पेयजल आपूर्ति राज्यों का विषय है लेकिन केन्द्र सरकार त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम के तहत राज्यों को ज्यादा ध्यान देकर उनके प्रयासों को तेज करने का प्रयास करती है।

श्री पटवा ने कहा कि ग्रामीण विकास का कोई भी कार्यक्रम लोगों की भागीदारी के बगैर कारगर सिद्ध नहीं हो सकता। इसलिए पंचायतों को स्वशासन का संस्थान बनाने के लिए वित्तीय और प्रशासनिक अधिकार देकर दायित्वों का विकेन्द्रीकरण आवश्यक है। इसके लिए अधिकांश राज्यों ने अपने वित्तीय आयोग की सिफारिशों को पूर्ण रूप से या कुछ संशोधनों के साथ स्वीकार कर लिया है। लेकिन इसके लिए आवश्यक निर्देश या कानून अभी अमल में नहीं आए हैं।

मंत्री महोदय ने कहा कि जवाहर ग्राम समृद्धि योजना ग्राम स्तर पर बुनियादी ढांचा खड़ा करने वाली योजना है। अनुसूचित जाति और जन जाति के लोगों को शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाएं देने में प्राथमिकता दी जा रही है। जमीनी स्तर पर लोगों की भागीदारी बढ़ाने के लिए पंचायतें ग्राम सभा की मंजूरी से 50 हजार रूपये तक खर्च कर सकती हैं।

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय
की
प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष 45 अंक 3

पौष–माघ 1921

जनवरी 2000

संपादक
बलदेव सिंह मदान

उप संपादक
जयसिंह

संपादकीय पता
संपादक, 'कुरुक्षेत्र',
ग्रामीण विकास मंत्रालय,
कृषि भवन, नई दिल्ली–110001
दूरभाष : 3015014
फैक्स : 011–3015014
तार : ग्राम विकास

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
डी.एन. गांधी

विज्ञापन प्रबंधक
के.एस. जगन्नाथ राव

आवरण सज्जा
अलका नय्यर

फोटो साभार :
मीडिया डिवीजन, ग्रामीण विकास मंत्रालय

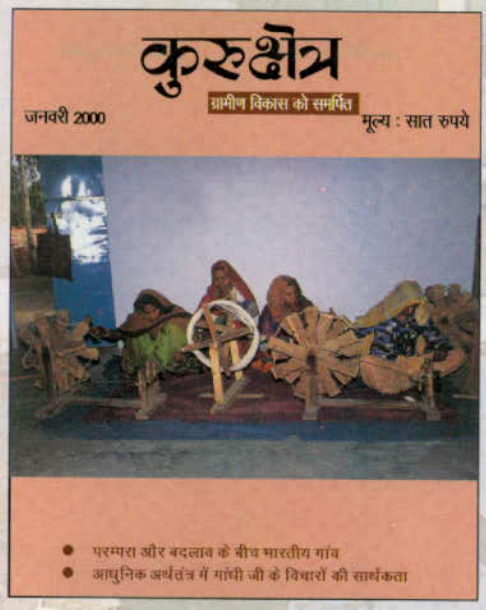

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक–4, लेवल–7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक–4, लेवल–7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। फोन : 6105590

मूल्य एक प्रति : सात रुपये
वार्षिक शुल्क : 70 रुपये
द्विवार्षिक : 135 रुपये
त्रिवार्षिक : 190 रुपये

हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी में भी प्रकाशित इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

इस अंक में

परंपरा और बदलाव के बीच भारतीय गांव	भारत डोगरा	3
नई सरकार और ग्रामीण क्षेत्र	वेद प्रकाश अंरोड़ा	6
संविधान की स्वर्ण जयंती और ग्राम पंचायतें	रामनरेश वर्मा	11
आधुनिक अर्थतंत्र में गांधी जी के विचारों की सार्थकता	डा. एस.सी. जैन	14
साक्षरता और सतत शिक्षा में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका	डा. सुरेन्द्र कुमार कटारिया	17
बचाव–पक्ष (कहानी)	जसविंदर शर्मा	22
विकास के प्रति ग्रामीण लोगों का दृष्टिकोण	ललित कुमार त्यागी	26
बंजर में बगिया खिलाने वाले छोटू खां कायमखानी	देवीसिंह नरूका	29
ग्रामीण क्षेत्रों में ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों की संभावनाएं	डा. दिनेश मणि	30
कुपोषण के सामाजिक–आर्थिक परिणाम	मैथिली मनोहरन	32
गर्भ के भीतर और बाहर कन्याओं की हत्या	डा. प्रनोब कुमार सरकार	35
रासायनिक कीटनाशकों के परंपरागत जैविक विकल्प	विजय जी	37
भारत पधारें	डा. राधे मोहन प्रसाद	39
तीव्र कीटाणुनाशी लौंग	प्रतिमान	41
मनुष्य और धरती (स्थायी स्तम्भ)	के.एस.वी. रामन	42

पाठकों के विचार

गांवों का कायाकल्प होगा, बशर्ते.....!!

कुरुक्षेत्र का अक्तूबर '99 माह का पंचायती राज विषेषांक भारत की 80 प्रतिशत आबादी की दशा–दिशा का पोस्टमार्टम करता हुआ बेहद रोचक, सटीक और ज्ञानवर्द्धक लगा। इतिहास इस बात का गवाह है कि सभ्यता के प्रत्येक स्तर पर व्यवस्था को प्रभावित करने में दो शक्तियां राजसत्ता यानी राजा की हुकूमत तथा लोकसत्ता यानी समाज की सत्ता प्रभावी रही हैं। इसी लोकसत्ता के विकास और प्रस्तुतीकरण का आधार सदैव पंचायत ही रही है लेकिन यह विडम्बना की पराकाष्ठा ही है कि गांधीजी का 'ग्राम स्वराज' का मिशन आज भी अपने मुकम्मल मुकाम से कोसों दूर है, प्रत्यक्ष लोकतंत्र का अनूठा प्रयोग सिर्फ योजना– कारों के ए.सी. कमरों की लैबोरेटरी तक ही सीमित रहा है क्योंकि पंचायती राज व्यवस्था के विभिन्न स्तरों पर आज भी गांव के एक तिहाई कमजोर और निम्न वर्गों/जातियों का प्रतिनिधित्व नगण्य है। कई समाजशास्त्रीय अध्ययनों ने स्पष्ट किया कि आधुनिकीकरण की प्रक्रिया धीरे–धीरे फैल तो रही है लेकिन गांवों का जीवन काफी हद तक परंपरागत ही है। बिहार में पिछड़ी जातियों का प्रतिशत कुल जनसंख्या का 37.81 प्रतिशत है जबकि पंचायती राज व्यवस्था में इनका प्रतिनिधित्व महज 5.22 प्रतिशत ही है। कुछ ऐसी ही निराशाजनक तस्वीर अन्य राज्यों की है। हालांकि भारत सरकार ने 1956, 1977, 1985, 1986, 1988, 1989 में क्रमशः बलवंत राय मेहता समिति, अशोक मेहता समिति, जी.वी.के. राव समिति, डा. लक्ष्मीमल सिंधवी समिति, पी.के. थुंगन समिति, बी.एन. गाडगिल समिति, और 1993 के 73वें संविधान संशोधन विधेयक तथा 1999 को *ग्राम सभा वर्ष* घोषित कर इस व्यवस्था को मजबूत कर खाई को पाटने की कोशिश की लेकिन इस अभियान में अभी पूरी सफलता मिलना शेष है।

आज भारत की आत्मा अर्थात् गांव संक्रमण के दौर से गुजर रहे हैं। आज भी गांव की भोली–भाली जनता अशिक्षा, ऋणग्रस्तता, पेयजल संकट, कुशल नेतृत्व के अभाव और गुटबाजी का शिकार बनी हुई है। ऊपर से रिश्वत तथा अकर्मण्यता की प्रवृत्ति साथ ही साथ दलित और कमजोर वर्गों के पंच/सरपंच यथा – गुड़िया बाई, कुमनी देवी अहिरवार एवं द्रौपदी देवी – का उच्च जातियों द्वारा सरेआम अपमान करना इस बात के स्पष्ट संकेत हैं कि गांवों का संभ्रात वर्ग नहीं चाहता कि व्यवस्था में कोई परिवर्तन हो।

अगर स्थिति ऐसी ही बनी रही तो गांधी का 'ग्राम स्वराज' का सपना, सपना ही बना रहेगा, गांवों के कायाकल्प के लिए बेहतर हो कि सरकार इन माइनर किंतु विकास की राह की मेजर त्रुटियों का समूल नाश करे, प्रैक्टिकल बनकर। सरकार अगर अपने कर्त्तव्यों के प्रति सकारात्मक रुख अपनाए तभी गांवों का कायाकल्प हो सकता है।

हर्ष वर्द्धन कुमार, पूर्वी लोहानीपुर, संतमार्ग, पटना–800003

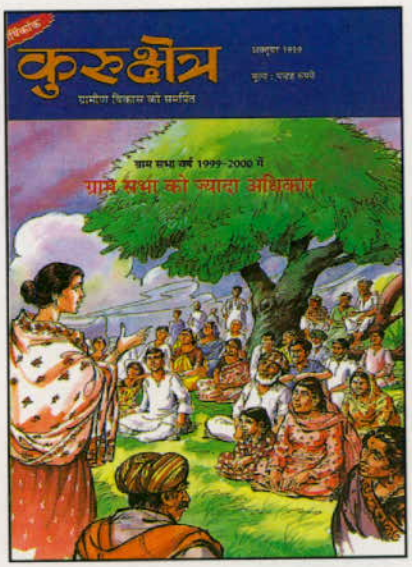

हर लेख उपयोगी

कुरुक्षेत्र का वार्षिकांक के रूप में अक्तूबर 99 का अंक पढ़ने को मिला। *ग्राम विकास और ग्राम सभा को ज्यादा अधिकार* विषय पर हर लेख काफी उत्कृष्ट और उपयोगी लगा। लेखों में प्रमुख – *ग्राम सभा संवैधानिक पक्ष और वास्तविकताएं, पांचवीं अनुसूची क्षेत्रों में ग्राम सभा की शक्तियां और अधिकार : एक मूल्यांकन, ग्राम सभा में दलितों की भागीदारी और ग्राम सभाओं को संवैधानिक अधिकार* काफी खोजपूर्ण जानकारियों से ओत–प्रोत लगे। पत्रिका ग्राम सभा के लिए अति उपयोगी सिद्ध होगी। इस बार का अंक बहुत पसंद आया।

कुरुक्षेत्र में बच्चों की रचनाएं भी प्रकाशित की जानी चाहिए तथा लेखकों का पूरा पता भी प्रकाशित किया जाना चाहिए।

बद्री प्रसाद वर्मा अनजान, गोला बाजार, गोरखपुर (उ.प्र.)

ग्राम सभा को ज्यादा अधिकार

कुरुक्षेत्र का अक्तूबर अंक पढ़ा। *ग्राम सभा वर्ष* के अवसर पर अंक वास्तव में अनूठा था। अपने देश में ग्रामीण लोगों के सामाजिक जीवन के उत्थान हेतु अनेक अधिकार संविधान में दर्ज हैं, परंतु उनकी

(शेष पृष्ठ 36 पर)

कुरुक्षेत्र परिवार की ओर से हमारे पाठकों को नव–वर्ष की शुभ कामनाएं!

परंपरा और बदलाव के बीच भारतीय गांव

भारत डोगरा

परम्परा और बदलाव के बीच अपना रास्ता बनाता एक भारतीय गांव

भारत के पांच लाख से अधिक गांवों में आजादी के बाद कैसा बदलाव हुआ? इतने विविधतापूर्ण ग्रामीण बदलाव को समझने के दृष्टिकोण अलग–अलग हो सकते हैं। अनेक उपलब्धियों और विफलताओं के बारे में हमारी समझ में अंतर हो सकता है, पर गांवों से जुड़े हुए किसी भी व्यक्ति को इस बात से इंकार नहीं होगा कि गरीबी अभी तक बड़े पैमाने पर मौजूद है।

ब्रिटिश साम्राज्य के दिनों की सबसे बड़ी दुखभरी दास्तान उन भयानक अकालों की है जो समय–समय पर भारतीय गांवों को रौंदते थे और लाखों की संख्या में लोग मारे जाते थे। स्वतंत्रता के बाद की यह एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है कि लाखों की मौत वाले इन अकालों से हमने सफलतापूर्वक छुटकारा पाया। इससे आगे का अगला महत्वपूर्ण लक्ष्य यह था कि भूख, कुपोषण और गरीबी को सदा के लिए हम अपने गांवों से दूर कर देते या बहुत कम कर देते, किंतु इस लक्ष्य में अभी हमें सफलता नहीं मिली है और ये समस्याएं काफी बड़े पैमाने पर आज तक हमारे गांवों में मौजूद हैं।

एक अन्य मुख्य विफलता यह रही है कि टिकाऊ और स्थायी विकास की संभावनाएं कम हुई हैं। जिस तेजी से वन–विनाश हुआ, अनेक गांवों में तेजी से जल–दोहन में वृद्धि के कारण जल–स्तर नीचे

चला गया और रासायनिक खाद के अत्यधिक और असावधान उपयोग के कारण कृषि भूमि का उपजाऊपन कम हुआ इससे पर्यावरण का संकट विकट हुआ और अगली पीढ़ी के लिए समस्याएं बढ़ीं। जो प्लांटेशन यूकेलिप्टस और पापूलर जैसे पेड़ों से किए गए, उन्हें प्राकृतिक वनों के विनाश की क्षतिपूर्ति नहीं माना जा सकता है। जल संसाधन की बड़ी–बड़ी परियोजनाएं बनीं, विशालकाय बांध बनाए गए, पर गांव स्तर पर जल के संरक्षण और संग्रहण को पर्याप्त महत्व नहीं दिया गया। फसल–चक्र में, फसलों की किस्मों में तेजी से रसायनों तथा मशीनों की मदद से कई ऐसे बदलाव किए गए जिससे अल्पकाल में उत्पादकता तो बढ़ी, पर आगे के लिए जो मिट्टी का उपजाऊपन कम होने का संकट उत्पन्न हुआ उस पर समुचित ध्यान नहीं दिया गया।

गरीबी की समस्या बने रहने और पर्यावरण का संकट विकट होने और उसके कारणों को समझने के लिए गांवों में परंपरा और बदलाव के बीच हो रहे टकराव पर ध्यान देना जरूरी है। आजादी के समय हमारे गांवों की जो दयनीय स्थिति थी उसे 1940 के दशक में पड़े बंगाल के अकाल ने बहुत क्रूरता से स्पष्ट कर दिया था। इस अकाल में लगभग तीस लाख लोग मारे गए। इस हृदयविदारक त्रासदी से यह स्पष्ट हो गया कि हमारे गांवों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में महत्वपूर्ण बदलाव की जरूरत है, पर इस बदलाव का सही रास्ता ढूंढ निकालने में हमसे कुछ गलतियां हुईं जिनका परिणाम आज गरीबी की गंभीर समस्या और पर्यावरण की बिगड़ती स्थिति के रूप में हमारे सामने हैं।

ब्रिटिश साम्राज्य का मुख्य उद्देश्य था हमारे गांवों में अपना आधिपत्य बनाए रखना और उन्हें आर्थिक संसाधनों के लिए निचोड़ना, वहां से अधिक से अधिक आर्थिक संसाधन अपने साम्राज्य के लिए एकत्र करना। साथ ही उन्होंने जुलाहों जैसे अनेक दस्तकारों के प्रति उपेक्षा ही नहीं की, विनाश की नीतियां भी अपनाईं ताकि ब्रिटेन के मशीनीकृत तरीकों से तैयार वस्त्र और अन्य औद्योगिक वस्तुओं की बिक्री भारत में बढ़ सके। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए उन्होंने भारतीय समाज में पहले से चली आ रही विषमताओं को और गहरा किया और अपने प्रति वफादार रहने वाले ऐसे जमींदारों, जागीरदारों, राजाओं–रजवाड़ों आदि को अपना विशेष समर्थन दिया जो गरीब जनता का तबाही की हालत तक शोषण करते थे। इस तरह औपनिवेशिक समय में विषमता और शोषण का साम्राज्य हमारे अधिकांश गांवों में बहुत बढ़ गया।

इस स्थिति में जिस क्षेत्र में सबसे अधिक और बुनियादी बदलाव की जरूरत थी वह था विषमता को दूर करने में। विशेषकर भूमि और अन्य तरह के संसाधनों से वंचित कर्ज में डूबे हुए, कई बार तो बंधक मजदूर की तरह काम करते हुए सबसे गरीब परिवारों को हमें अपनी पहली प्राथमिकता बनाना चाहिए था। यहीं हमसे भूल हो गई। हम सबसे निर्धन परिवार तक नहीं पहुंच सके, अंत्योदय के आधार पर कार्य नहीं कर सके। यह सच है कि जमींदारी समाप्त करने का कानून जोर–शोर से बना, कुछ हद तक सामंती शोषण पर चोट भी की गई, पर विषमता की व्यवस्था में जो व्यापक बदलाव आना चाहिए था, वह नहीं आ सका। मध्यम वर्ग के किसानों को कुछ लाभ अवश्य मिले, उनके स्वतंत्र विकास की संभावनाएं बढ़ीं जिसका उनमें से अनेक ने उचित लाभ भी उठाया। किंतु सबसे गरीब भूमिहीन या लगभग भूमिहीन वर्ग की स्थिति में विशेष सुधार नहीं हुआ। अनेक क्षेत्रों में उनसे होने वाला तरह–तरह का सामाजिक–आर्थिक अन्याय जारी रहा। कुछ क्षेत्रों में तो आदिवासियों की भूमि बड़े पैमाने पर उनसे छिन गई। भूमि–सुधार के जो कानून बनाए गए उनको ठीक से लागू नहीं किया गया तथा उनका बहुत कम लाभ – सबसे निर्धन वर्ग तक पहुंच सका।

जहां एक ओर हम पहले से चल रही शोषण और विषमता की व्यवस्था में बुनियादी बदलाव नहीं ला सके, वहां जिन क्षेत्रों में हम अपनी समृद्ध परंपरा से वास्तव में कुछ सीख सकते थे वहां हमने इसकी उपेक्षा की। उदाहरण के लिए, कृषि तथा सिंचाई की तकनीक में स्थानीय भौगोलिक परिस्थितियों और जलवायु के अनुकूल कई शताब्दियों से किसानों तथा अन्य ग्रामवासियों ने धीरे–धीरे जो प्रगति की थी, जिसमें कितनी ही पीढ़ियों का ज्ञान संग्रहीत था, उसकी ओर हमने पर्याप्त ध्यान नहीं दिया। हमने गांवों के पिछड़ेपन को देखा और यहां की हर बात को पिछड़ी हुई मान लिया। यह हमारी भूल थी, सच कहें तो बहुत बड़ी भूल थी। गांव के पिछड़ेपन और गरीबी का सबसे बड़ा कारण शोषण और विषमता की व्यवस्था थी। यदि इसे हम दूर करने पर ध्यान केंद्रित करते तो हमें साथ ही साथ गांवों के किसानों–मजदूरों–दस्तकारों, विशेषकर बुजुर्ग लोगों के पास संग्रहीत बहुत–सी जानकारी और ज्ञान को समझने का अवसर भी मिलता।

उन्नीसवीं शताब्दी में जैसे–जैसे ब्रिटिश शासन भारत के अधिकांश क्षेत्रों में फैलता गया वैसे–वैसे गांवों की आर्थिक तबाही बढ़ती गई। इसके बावजूद उस समय के अनेक ब्रिटिश और अन्य यूरोपीय कृषि तथा सिंचाई विशेषज्ञों ने भी इस बात को नोट किया था कि जहां तक कृषि और सिंचाई की परंपरागत तकनीक का सवाल है वह बहुत उत्कृष्ट कोटि की है और भारतीय किसानों के तौर–तरीके बहुत समृद्ध हैं। दस्तकारों के हुनर के बारे में भी बहुत–से वृत्तांत मिलते हैं। हमारे गांवों की परंपरागत तकनीकी में स्थानीय जलवायु और भौगोलिक परिस्थितियों से अनुकूलता थी, जटिल स्थानीय समस्याओं के व्यावहारिक समाधान की कुशलता थी।

उदाहरण के लिए, हमारे देश में वर्षा मुख्य रूप से मानसून के दो–तीन महीनों में केंद्रित है। अतः जल संरक्षण तथा संग्रहण की विशेष आवश्यकता है। ब्रिटेन में वर्ष भर कुछ न कुछ वर्षा होती रहती है वह भी धीरे–धीरे। अतः वहां जल संग्रहण तथा संरक्षण की इतनी आवश्यकता नहीं है। वहां की स्थिति के आधार पर काम करने वाले विशेषज्ञों ने भारत के परंपरागत जल संग्रहण और संरक्षण के तौर–तरीकों की उपेक्षा की तो यह बात समझी जा सकती है, पर आजादी के बाद हम स्वयं भी यही करते रहे यह विशेष दुख की बात है।

संक्षेप में कहें तो भारतीय गांवों के संदर्भ में परंपरा या ट्रेडीशन के दो पक्ष हैं। एक पक्ष विषमता, अन्याय, अंध विश्वास, छुआछूत आदि से संबंधित है जिसका जम कर विरोध होना चाहिए। पर परंपरा का एक दूसरा पक्ष भी है जो कई पीढ़ियों और शताब्दियों से किसानों, मजदूरों,

दस्तकारों, वैद्यों, तालाब बनाने वालों, जल–संग्रहण की व्यवस्था से जुड़े विशेष समुदायों, पशु–पालकों द्वारा संग्रहीत ज्ञान से संबंधित है। यह ज्ञान प्रायः अलिखित रूप से ही एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचता रहा है। इस परंपरा द्वारा ही बहुत–सी जैव विविधता बचाई गई है और बढ़ाई गई है, विभिन्न फसलों की हजारों किस्में उपलब्ध करवाई गई हैं, हजारों तरह की जड़ी–बूटियों के विविध गुण पता लगाए गए हैं, बेहद विकट परिस्थितियों में जल संकट का सामना करने के उपाय खोजे गए हैं। अतः इस परंपरा को बचाए रखना और इसकी रक्षा करना बहुत जरूरी है। स्थानीय परिस्थितियों और जलवायु की जरूरतों के अनुसार यह ज्ञान अमूल्य है।

आजादी के बाद के ग्रामीण विकास में हमसे मुख्य गलती यह हुई कि गांवों में पहले से चली आ रही शोषण और विषमता की व्यवस्था का हम जम कर विरोध नहीं कर सके, उससे कई स्तरों पर समझौता करते चले गए जैसे कि भूमि–सुधारों को काफी हद तक असफलता के सन्दर्भ में देखा गया। दूसरी ओर परंपरा के जिन पक्षों से हमें सीखना था, आधुनिक आकर्षक तकनीक के प्रचार–प्रसार में परंपरा के उन महत्वपूर्ण पक्षों की हम उपेक्षा कर बैठे। अरबों रुपये के बड़े–बड़े डैम बना दिए पर पहले से चले आ रहे तालाबों की ठीक मरम्मत तक हम नहीं कर सके। इसी तरह गांव–मुहल्ले के स्तर पर सामान्य हित के लिए मिल–जुल कर कार्य करने की जो परंपरा थी, उसमें भी कमी आई। गांव की चरागाह, वन तथा अन्य हरियाली की रक्षा के प्रति, तालाबों तथा जल–संग्रहण–संरक्षण की विधियों के प्रति जो सामूहिक जिम्मेदारी की भावना थी, उसका भी ह्रास हुआ।

अभी भी बहुत देर नहीं हुई है और समय रहते हम अपनी गलतियों को सुधार सकें तो गांवों की स्थिति सुधारने में, उनके टिकाऊ और न्यायपूर्ण विकास में, पर्यावरण संरक्षण करने में तथा गरीबी दूर करने में हम निकट भविष्य में महत्वपूर्ण उपलब्धियां हासिल कर सकते हैं। भविष्य में गांवों में सार्थक विकास के दो महत्वपूर्ण पक्ष निर्धारित करने होंगे। पहली बात तो यह है कि शोषण और विषमता के विरुद्ध संघर्ष करना और गरीब से गरीब परिवारों को गांव की भूमि तथा अन्य संसाधनों का उचित, न्यायसंगत हिस्सा देना। दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि कृषि, तकनीक, सिंचाई, जल–संग्रहण, वानिकी आदि क्षेत्रों में हम कई शताब्दियों और पीढ़ियों से संचित ज्ञान को पहचानें और इससे सीख लेते हुए, उसके अनुभव का लाभ उठाते हुए ही आगे बढ़ें। केवल अल्पकालीन उत्पादन बढ़ाने के बारे में न सोचें अपितु आने वाली पीढ़ियों की भलाई पर भी पर्याप्त ध्यान दें। मिट्टी का उपजाऊपन बनाए रखें, भूजल का स्तर बहुत नीचे न जाने दें, वनों को बचाएं तथा जैव विविधता की रक्षा करें तभी स्थायी और न्यायपूर्ण ग्रामीण विकास की बुनियाद पड़ सकेगी। इस तरह के एक सार्थक प्रयास की जानकारी नीचे बाक्स में दी गई है।

सार्थक ग्रामीण विकास का एक उदाहरण

चित्रकूट जिले (उत्तर प्रदेश) के पाठा क्षेत्र के अनेक गांवों में अखिल भारतीय समाज सेवा संस्थान नामक स्वैच्छिक संगठन के प्रयासों में पिछले लगभग पंद्रह वर्षों के दौरान परंपरा और बदलाव का अच्छा समन्वय देखने को मिला है और इसके अच्छे परिणाम भी सामने आ रहे हैं। पाठा क्षेत्र (मानिकपुर और मऊ ब्लाक) अनेक दबंग सामंतों का ऐसा गढ़ था जहां के कोल आदिवासियों और अन्य निर्धन वर्ग के मजदूरों को पूरी तरह दबा कर रखा जाता था तथा उनमें से अनेक मजदूर तो बंधक मजदूर के रूप में कार्य करने को मजबूर थे। इस स्थिति को बदलने के लिए संस्थान ने निरंतर संघर्ष किया और कोल आदिवासियों को संगठित किया।

संस्थान ने प्रशासन से भूमि के रिकार्ड प्राप्त किए और फिर जमीनी जांच कर पता लगाया कि इनमें से कितनी जमीन पर सामंतों का अवैध कब्जा है। फिर इन कब्जों को हटा कर भूमि सही व्यक्ति तक पहुंचाने के प्रयास किए गए। प्रशासनिक अधिकारियों से सम्पर्क कर जन–अदालतों का आयोजन किया गया जिससे सामंती जुल्म के शिकार लोगों को मौके पर ही न्याय मिल सके। भूमिहीनों को पट्टा दिलाने के लिए भी संस्थान ने निरंतर प्रयास किया। इस तरह संस्थान के प्रयासों से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से लगभग तीन हजार से चार हजार परिवारों को लगभग दस हजार एकड़ भूमि प्राप्त हो सकी। साथ ही अनेक बंधक मजदूर मुक्त हुए। लघु वन उपज के संग्रहण से आदिवासियों को जो आय मिलती थी उसमें वृद्धि हुई।

जहां एक ओर संस्थान ने संघर्ष का रास्ता अपना कर शोषण और विषमता की व्यवस्था को सीधे–सीधे चुनौती दी, वहां जल–संग्रहण तथा संरक्षण, सिंचाई, स्वास्थ्य आदि क्षेत्रों में उसने परंपरा से सीखने का प्रयास किया। तालाबों की मरम्मत कर तथा नए तालाब बनाकर, जहां, वर्षा का पानी गिरता है वहीं उसे रोक कर और संग्रह कर लगभग एक हजार एकड़ भूमि पर सिंचाई की व्यवस्था की, साथ ही मृदा और जल–संरक्षण के अन्य प्रयासों से लगभग दो हजार एकड़ अन्य भूमि की उत्पादकता बढ़ाई। विशेष प्रयास उन निर्धन किसानों की सहायता करने का रहा जिन्हें हाल ही में भूमि उपलब्ध हुई है और उन्हें अभी खेती किसानी के क्षेत्र में जमना है। आज हम ऐसी कुछ निर्धन लोगों की बस्तियों में जाएं तो उनकी पहचान ही बदल चुकी है क्योंकि वहां पहले बंजर भूमि थी अब हरी–भरी फसल लहलहा रही है।

इस क्षेत्र के कोल आदिवासियों के इतिहास के बारे में जानकारी प्राप्त करने, उनके गीत, संगीत, नृत्य आदि को लुप्त होने से बचाने के प्रयासों से भी परम्परा को सार्थक पक्ष से जोड़ा गया है। संस्थान के शिक्षा कार्यक्रम में कोल बच्चों को अपने समुदाय की बहुपक्षीय भलाई से जुड़ने के संस्कार आरंभ से दिए जाते हैं। इनमें से अनेक कोल बालक आगे चलकर शिक्षक या सामाजिक कार्यकर्त्ता बनना चाहते हैं।

इस तरह एक ओर विषमता और अन्याय का विरोध कर तथा दूसरी ओर परम्परा के सार्थक पक्ष को आगे बढ़ा कर संस्थान ने परंपरा और बदलाव के बीच अच्छा समन्वय स्थापित किया है।

नई सरकार और ग्रामीण-क्षेत्र

वेद प्रकाश अरोड़ा

नई संसद के दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में राष्ट्रपति का अभिभाषण किसी भी सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों का दर्पण होता है। कुछ की निगाह में यह दर्पण मटमैला, कुछ की नजर में साफ–सुथरा, और कुछ की दृष्टि में यह एकदम बेकार होता है। तो भी इसमें अतीत की तल्खियों, पिछली विपक्षी सरकार की गलतियों और अगर अपनी ही सरकार रही हो तो उसकी उपलब्धियों, वर्तमान की उमंगों, चुनौतियों और कठिनाइयों तथा भविष्य के सपनों–संकल्पों और योजनाओं–परियोजनाओं का लेखा–जोखा होता है। यह बात 13वीं लोकसभा तथा नई शताब्दी की पहली लोकसभा में राष्ट्रपति श्री के.आर. नारायणन के अभिभाषण में उजागर हुई है। अभिभाषण में कहा गया है कि हम ने ऐसे कई मौके गंवाए हैं जिनकी वजह से आजाद भारत चहुमुखी प्रगति और सतत सुख–समृद्धि से वंचित रहा है। अभिभाषण में सामाजिक क्षेत्र के विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता देने से सरकार की जन–जन के कल्याण के प्रति प्रतिबद्धता प्रकट होती है। गरीबी, अशिक्षा और बीमारी देश के तीन सबसे बड़े कोढ़ हैं। इस त्रि–आयामी कोढ़ का अधिक प्रसार ग्रामीण क्षेत्रों में है। अभिभाषण में इस बहु–आयामी कोढ़ से लड़ने के संकल्प की अभिव्यक्ति है। इसी तरह आबादी का प्रसार तथा पेय जल और आवास की कमी तीन सामाजिक चुनौतियां मुंह बाए खड़ी हैं, जिनसे जूझने की वचनबद्धता इस अभिभाषण में व्यक्त होती है। जहां तक गरीबी का संबंध है,

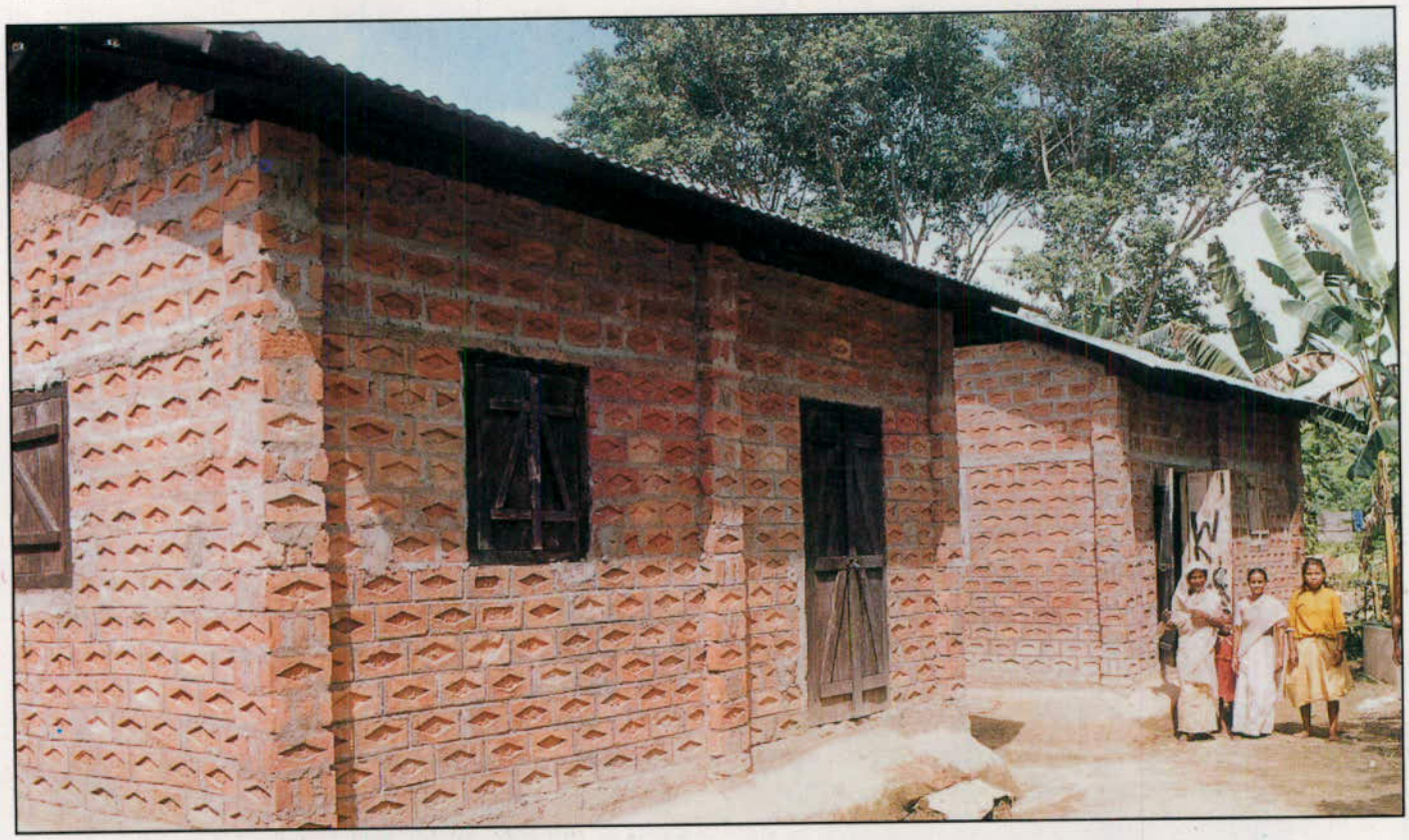

नई सरकार के एजेंडे का एक प्रमुख लक्ष्यः सभी ग्रामीण गरीबों का अपना मकान

सरकार ने प्रत्येक वर्ष एक लाख नौकरियों का जुगाड़ करने और बीस लाख मकान बनाने का फैसला किया है। इनमें 13 लाख मकान गांवों में और सात लाख मकान शहरों में बनाए जाएंगे। निस्संदेह इससे नई सरकार की हितकारी मानसिकता की छाप स्पष्ट उभर कर सामने आई है। शहरों और विशेषरूप से देहाती इलाकों की झुग्गियों और कच्चे मकानों में रहने वाले गरीब व्यक्तियों के लिए अभिभाषण में यह बात महत्वपूर्ण है कि पांच वर्षों में सभी गांवों में पेयजल उपलब्ध कराया जाएगा। इसका एजेंडा इतना बहु–आयामी और बहु–क्षेत्रीय है कि उसका सभी क्षेत्रों में स्वागत हुआ है पर साथ ही यह आशंका उत्पन्न हुई है कि क्या इतना बड़ा और व्यापक एजेंडा मूर्तरूप ले पाएगा। इसमें अंतर्राष्ट्रीय, आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक सभी पहलुओं को स्पर्श कर उनका समाधान करने का प्रयास किया गया है। इसमें अगर अनुसूचित जातियों और जनजातियों का आरक्षण दस वर्ष बढ़ाने, संसद और विधानसभाओं का पूरा कार्यकाल सुनिश्चित करने, चुनाव सुधार करने, भ्रष्टाचार उन्मूलन के मामले में प्रधानमंत्री को लोकपाल के दायरे में लाने तथा न्यूनतम परमाणु प्रतिरोधात्मक शक्ति संपन्न राष्ट्र बनाने जैसे मन्तव्यों का उल्लेख है, तो पंचायती राज को आगे बढ़ाने, महिलाओं को संसद और विधानसभाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण देने, लड़कियों को कालेज तक मुफ्त शिक्षा देने तथा देहाती और शहरी क्षेत्रों में विभिन्न वर्गों के लिए उत्थान की विभिन्न योजनाएं देकर सभी का मनमोह लिया गया है। सरकार ने देश को सैन्य महाशक्ति बनाने के साथ–साथ आर्थिक और सामाजिक महाशक्ति बनाने का सद्प्रयास करने का भी उल्लेख किया है।

मार्ग–दर्शक नीतियां

नई सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों का मुख्य मार्गनिदेशक सिद्धांत होगा – रोजगार और बराबरी के साथ–साथ तीव्रतर विकास। इसके लिए वह प्रत्येक वर्ष रोजगार के जिन एक करोड़ अतिरिक्त अवसरों को उपलब्ध कराएगी वे मुख्य रूप से कृषि, कृषि–आधारित व्यवसायों, छोटे और कुटीर उद्योगों, आवास और निर्माण, सेवाओं और स्व–रोजगार के क्षेत्रों में जुटाए जाएंगे। इन व्यवसायों का ज्यादातर संबंध गांवों से होने के कारण वहां जिंदगी एक नई करवट लेने लगेगी। घर–घर में खुशियों और खुशहाली के नए द्वार खुल जाएंगे। लेकिन इसके लिए जरूरी है कि आगामी वर्षों में भारत का विकास कम से कम सात–आठ प्रतिशत हो, वरना हम किसी भी स्थिति में गरीबी और बेरोजगारी नहीं हटा पाएंगे। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय दोनों क्षेत्रों का हमारा अनुभव यह बताता है कि आर्थिक सुधारों की साहसिक कार्यनीति अपनाने से ही तेज और बहु–आयामी विकास हो सकता है। राष्ट्र के विकास की पुनर्निरूपित कार्यनीति तीन बातों पर निर्भर करेगी। एक, सरकार मजबूत नीति और नियामक नेतृत्व प्रदान करती है। दो, निजी क्षेत्र का स्पर्धात्मक माहौल गतिशीलता और कार्य–कुशलता प्रदान करता है और तीन, स्थानीय लोकतांत्रिक संस्थाएं लोगों को उत्साहवर्धक भागीदारी प्रदान करती हैं। इस कार्य–नीति में समाज, राजतंत्र और प्रशासन तंत्र के प्रत्येक वर्ग से एक नई विकास–परक सोच की अपेक्षा की जाती है जिससे अतीत की लीक से हटकर सुदृढ़ राष्ट्रीय सहमति बनाई जा सके।

सामाजिक क्षेत्र

इस सर्वोपरि दूर–दृष्टि से प्रेरित होकर सरकार ने सामाजिक क्षेत्र के विकास को सबसे ऊंची प्राथमिकता दी है। शिक्षा के क्षेत्र में अलग प्राथमिक शिक्षा और साक्षरता विभाग बनाया गया है। महिला अक्षरज्ञान और प्राथमिक शिक्षा को अधिक गतिशील बनाने की कार्य–योजना की घोषणा जल्दी की जाएगी। इसके अलावा ऐसी सभी बस्तियों में प्राथमिक शिक्षा की इमारतों की व्यवस्था के लिए कार्यक्रम बनाया जाएगा जहां इस समय इमारतें मौजूद नहीं हैं। उच्चतर और तकनीकी शिक्षा में निजी क्षेत्र की भागीदारी की सक्रियता को बढ़ावा दिया जाएगा।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति

सामाजिक क्षेत्र के दायरे में लोगों के स्वास्थ्य में सुधार भी शामिल होता है। पानी स्वच्छ हो तो स्वास्थ्य में सुधार की पहली और सर्वोपरि आवश्यकता पूरी हो जाती है। अनेक रोगों से जो मुक्ति मिलती है वह अलग। यह तथ्य उड़ीसा में आए भयंकर तूफान के बाद प्रदूषित पानी से हुई मौतों से रेखांकित हो जाता है। इसे ध्यान में रखते हुए जल्दी ही एक राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति पेश की जाएगी जिसका दोहरा उद्देश्य होगा। एक, सभी नागरिकों को प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराना और दो, जनसंख्या को स्थिर बनाना। समाज की अधिक भागीदारी से प्रजनन और बाल स्वास्थ्य सेवाओं को अधिक मजबूत बनाना होगा। भारतीय चिकित्सा प्रणालियों के प्रयोग को प्रोत्साहित किया जाएगा। सरकारी और गैर–सरकारी संयुक्त प्रयासों से विकलांगों और वृद्धों के कल्याण पर अधिक ध्यान दिया जाएगा। तीन, सभी स्तरों की स्वास्थ्य सेवाओं में निजी क्षेत्र की भागीदारी को प्रोत्साहित करना होगा, इनमें विशेषतया अस्पताल, रोग जांच केंद्र और संबद्ध गतिविधियां शामिल होंगी। स्वास्थ्य संबंधी क्रिया–कलापों में भारत जैसे विशाल देश में विशेषज्ञ–डाक्टरों की हमेशा कमी रहेगी। इसलिए निजी क्षेत्र के डाक्टरों की सहायता प्राप्त करने की अनिवार्यता भी सदा बनी रहेगी। वैसे भी जुलाई 1991 से निजी क्षेत्र की जो विश्वव्यापी हवा चल रही है, उसमें निजी डाक्टरों की सेवाएं उपलब्ध करने का कोई भी विरोध नहीं करेगा। गांवों में तो नीम–हकीमों और फर्जी डाक्टरों की भरमार है, उनसे छुटकारा तभी पाया जा सकेगा जब ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों और अस्पतालों का जाल बिछा दिया जाए तथा इनमें योग्यता–प्राप्त डाक्टरों की सेवाएं उपलब्ध कराई जाएं।

अनुसूचित जातियां

अभिभाषण में सरकार ने अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, पिछड़े वर्गों और अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा के लिए वचनबद्धता व्यक्त की है। उनके हितों की रक्षा समुचित कानूनी, प्रशासनिक और सामाजिक कार्यों से की जाती है। इसके लिए मुख्य ध्यान बड़े पैमाने पर शिक्षा, सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में उन्हें अधिकार संपन्न बनाने पर केंद्रित रहता है। सरकार समाज से छूआछूत के अंतिम अवशेषों को भी हटा देने के लिए प्रतिबद्ध है। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित

जनजातियों के लिए आरक्षण और दस वर्ष के लिए बढ़ाया गया है। इतना ही नहीं, कुछ राज्यों द्वारा अपनाए जा रहे 50 प्रतिशत से अधिक आरक्षण को कानूनी उपायों से मान्यता दिलाई जाएगी। सरकार ने पहले ही जनजातीय मामलों का एक मंत्रालय बना रखा है। यह मंत्रालय जनजातीय भाइयों के सर्वांगीण कल्याण के लिए नीतियों और कार्यक्रमों को बेहतर ढंग से तैयार और लागू करता है तथा निगरानी रखता है।

छोटे और कुटीर उद्योग

बुनियादी ढांचे के निर्माण के विभिन्न उपायों से भारत के औद्योगिक आधार, विशेषरूप से छोटे और कुटीर उद्योगों, देहाती दस्तकारों और कारीगरों तथा खादी और ग्रामाद्योग आयोग के एक बड़े लेकिन उपेक्षित क्षेत्र में फिर से जान फूंकने और उसके विस्तार के लिए कोशिश की जाएगी। इस क्षेत्र की विविध आवश्यकताएं पूरी करने पर विशेष जोर दिया जाएगा। इन आवश्यकताओं में ऋण गारंटी योजना को लागू करने सहित, समय पर पर्याप्त ऋण उपलब्ध कराना, विपणन, प्रौद्योगिकीय उन्नयन, कौशल सुधार और सबसे बढ़कर नौकरशाही के उत्पीड़न की समाप्ति शामिल हैं। लघु उद्योग क्षेत्र के, खास चुने गए कुछ ऐसे उद्योगों के नियमों में उपयुक्त संशोधन किए जाएंगे, जिनमें निर्यात और रोजगार की काफी संभावनाएं हों। सरकार, विशेषरूप से बहु रेशा समझोते के बाद की चुनौतियों को देखते हुए भारतीय कपड़ा उद्योग की काफी समय से चली आ रही समस्याओं के समाधान के लिए व्यापक और सतत प्रयास करेगी। भारतीय कपड़ा उद्योग विश्व बाजारों में अपना परम्परागत उच्च स्थान प्राप्त कर सके, इसके लिए इस उद्योग के आधुनिकीकरण और पुनर्गठन के लिए जरूरी कदम उठाए जाएंगे।

श्रमिक कल्याण

नई सरकार आर्थिक सुधारों के नए वातावरण में श्रमिकों, विशेषरूप से असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों, के हितों को बढ़ावा देने के लिए पूरी तरह वचनबद्ध है। श्रम आयोग विभिन्न श्रम कानूनों में आवश्यक परिवर्तनों का अध्ययन करेगा जिससे श्रमिकों के कल्याण के लिए बेहतर काम हो सके, अतिरिक्त रोजगार के तेजी से अवसर जुटाए जा सकें, सुदृढ़ आधार पर औद्योगिक विकास हो सके और निर्यात बढ़ सके।

पानी का अभाव

पानी की कमी तमाम विश्व में चाहे शहर हो और चाहे गांव – सभी जगह तेजी से एक गंभीर राष्ट्रीय समस्या बनती जा रही है। गांवों में लोगों को कई मील पैदल चलकर पानी नसीब हो पाता है। राजस्थान जैसे कुछ गरम और सूखे इलाकों में तो पानी की सतह इतनी नीचे चली गई है कि कुंएं और बोर वैल तक सूख गए हैं। यहां तक कि काफी गहराई तक खोदे गए ट्यूबवैल भी बेकार हो गए हैं। इस स्थिति में पानी को बचाकर सुरक्षित रखना और उसका प्रबंधन ठीक से करना बहुत जरूरी है, वरना वह दिन दूर नहीं जब घरों, खेतों और उद्योगों की बढ़ती मांग पूरी करने के लिए यथेष्ट पानी नहीं मिल पाएगा। अब सरकार पानी की एक ऐसी नीति पेश करेगी कि समुचित प्रशासनिक, वाणिज्यिक और प्रौद्योगिकीय

ग्रामीण क्षेत्रों में पेय जल अब बहुत दुर्लभ वस्तु नहीं

समाधान निकाल कर यह सुनिश्चित कर दिया जाए कि वर्तमान और भावी पीढ़ियां इस जीवनदायी स्रोत से वंचित न हो पाएं। साथ ही राज्यों के जल–विवाद समुचित तरीके से हल कर लिए जाएं। सतत विकास का लक्ष्य पाने के लिए पर्यावरण सुरक्षा और वानिकीकरण की जरूरतें पूरी करनी होंगी, जो पानी की उपलब्धता से ही संभव है।

ग्रामीण आधारभूत संरचना–1

सरकार ग्रामीण बुनियादी ढांचे को सुधारने पर नए सिरे से जोर देगी। ग्रामीण विकास मंत्रालय में नया गठित पेयजल आपूर्ति विभाग अगले पांच वर्षों में सभी गांवों को पीने का साफ पानी देने के कार्यक्रम को लागू करेगा। बारहमासी सड़कों का निर्माण कर सभी गांवों को जोड़ने का कार्यक्रम जल्दी शुरू किया जाएगा। डीजल पर शुल्क से प्राप्त रकम का आधा हिस्सा इस कार्यक्रम के लिए निर्धारित होगा। सभी के लिए आवास का एक व्यापक कार्यक्रम हाथ में लिया जाएगा।

ग्रामीण आधारभूत संरचना–2

इसके अंतर्गत हर वर्ष जो बीस लाख अतिरिक्त मकान बनाए जाएंगे, उनमें से 13 लाख मकान देहाती इलाकों में और 7 लाख शहरी इलाकों में होंगे। राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन के एजेंडे पर नजर दौड़ाने पर हम पाते हैं कि उसमें राज्य सरकारों के साथ परामर्श से ऐसी राष्ट्रीय आवास और पर्यावास नीति तैयार करने का संकल्प व्यक्त किया गया है जिसमें सभी के लिए मकान जुटाने का प्रावधान है। इस कार्यक्रम में अन्य कार्यक्रमों की तरह मूल स्वर गांवों के गरीबों और वंचितों के जीवन में खुशियां लाना है।

कृषि–क्षेत्र

देहाती इलाकों में खुशहाली और रोजगार के अवसरों का सृजन मुख्यतः तेजी से बढ़ रहे कृषि–क्षेत्र पर निर्भर करता है। इस काम में कृषि आधारित उद्योगों का राष्ट्रव्यापी संजाल पूरक का काम करता है। सरकार कृषि–क्षेत्र में वर्षा पर निर्भर खेती के विकास, मिट्टी के उपजाऊपन के संरक्षण, परती भूमि के विकास, जल–संग्रह विकास, कृषि–ऋण व्यवस्था, बागवानी, फूल उगाने के व्यवसाय के संवर्धन, शीत भंडारों के संजाल के विस्तार, उर्वरकों के मूल्य निर्धारण, रासायनिक उर्वरकों के संतुलित उपयोग और जैव खाद के प्रोत्साहन की ओर ध्यान देकर उनकी समस्याओं का समाधान करेगी। नई नीति में सहकारी क्षेत्र के सुधारों, फसल बीमा से जुड़े सवालों, फसल की कटाई के बाद के प्रबंधन, कृषि उपज के मूल्य निर्धारण और सरकारी खरीद की नीति, पूर्वानुमान लगाने और शुरू में ही बाढ़, ओलावृष्टि या सूखे की चेतावनी देने की व्यवस्था पर भी जोर दिया जाएगा। अधूरी पड़ी सिंचाई परियोजनाओं को समयबद्ध कार्यक्रम से जल्दी पूरा करने की कार्य–योजना को भी शुरू किया जाएगा।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी

रही बात विज्ञान और प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देने की, तो सरकार इस क्षेत्र में सामाजिक और आर्थिक विकास की जटिल चुनौतियों का सामना करने के लिए शिक्षा, बुनियादी अनुसंधान और इसके प्रयोग में विज्ञान और प्रौद्योगिकी को प्रोत्साहित करने की अधिक कोशिश करेगी। **'जय विज्ञान'** के संदेश को ध्यान में रखते हुए शहरों और गांवों – सभी क्षेत्रों के बच्चों में वैज्ञानिक सोच पैदा करने, समस्या का वैज्ञानिक समाधान ढूढ़ने का दृष्टिकोण विकसित करने और होनहार युवा–वैज्ञानिक प्रतिभाओं को प्रोत्साहित किया जाएगा।

युवा–कल्याण

युवा–वर्ग राष्ट्र निर्माण के कार्यों को गति प्रदान करता है। सरकार देशभर में हजारों युवाओं और विद्यार्थी संगठनों के रचनात्मक कार्यों, खेलों, कला और संस्कृति में उत्साहपूर्वक भाग लेने के काम को नए सिरे से गतिशील बनाने में सहयोग देगी। इसका मुख्य उद्देश्य राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करना, स्वयं सेवा की भावना को जगाना और प्रतिभा–संपन्न युवकों और युवतियों को विश्व में अपना नाम कमाने के लिए सक्षम बनाना है। इसके लिए गांवों में खेलों के आयोजन और स्टेडियम बनाने पर जोर दिया जाएगा।

न्यायिक प्रणाली

जहां तक न्यायिक प्रणाली का संबंध है सरकार ने तेज सामाजिक और आर्थिक विकास की राह में अड़चन डालने वाले पुराने कानूनों और नियमों–विनियमों का अध्ययन किया है। इस अध्ययन की सिफारिश के आधार पर ऐसे पुराने और गैर–जरूरी कानूनों को रद्द कर दिया जाएगा जिससे समाज और देश सही मायने में तेजी से उन्नति की डगर पर कदम बढ़ा सके।

दूर–संचार नीति

राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की नई सरकार 1999 की नई दूर–संचार नीति को जल्दी लागू कर आम लोगों को भी, जहां तक हो सके, न्यूनतम मूल्य पर विश्व श्रेणी की संचार सेवाएं उपलब्ध कराने का लक्ष्य प्राप्त करेगी। जिन गांवों में टेलीफोन सेवा नहीं है, उनके लिए विशेष योजना बनाकर समयबद्ध कार्यक्रम के जरिए ग्रामीण दूरभाष सेवा उपलब्ध कराई जाएगी। दूर–संचार विभाग को इंडिया टेलीकोम (भारत दूर–संचार) के रूप में निगम में परिवर्तित करने का काम जल्दी अमल में लाया जाएगा। पहले कदम के रूप में निर्णय लेने के काम को, सेवा प्रदान करने के काम से अलग करने के लिए नया दूर–संचार सेवा विभाग बनाया गया है। पूंजी निवेशकों का विश्वास बढ़ाने के लिए भारतीय टेलीफोन नियामक प्राधिकरण अधिनियम में समुचित परिवर्तन कर सरकारी और निजी आपरेटरों को काम के मामले में बराबर का धरातल प्रदान किया जाएगा। भारतीय टेलीग्राफ अधिनियम 1885 के स्थान पर नए कानून की सिफारिश के लिए एक विशेष दल बनाया जाएगा जिससे दूर संचार, कंप्यूटर, टेलीविजन और इलेक्ट्रानिकी के बीच प्रौद्योगिकी के सामंजस्य से नए अवसरों का लाभ उठाया जा सके।

अगर नई सरकार इस एजेंडे को पूरा कर दिखाए तो इतिहास में उसके नाम और कार्यों का उल्लेख स्वर्ण अक्षरों में होगा। ये सब घोषणाएं, चुनावी घोषणापत्र, चुनावी भाषण, सरकारी एजेंडे और राष्ट्रपति के संसद में किए गए सम्बोधन चार दीवारी तक सीमित न रह कर ठोस

(शेष पृष्ठ 31 पर)

चुनावों के बिना लोकतंत्र नहीं और राजनीतिक दलों के बिना चुनाव नहीं

राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान के स्थापना दिवस पर ग्रामीण विकास मंत्री के भाषण से

हैदराबाद स्थित राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान ने 4–5 नवंबर 1999 को संस्थान के परिसर में अपना स्थापना दिवस मनाया। केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्री श्री सुन्दर लाल पटवा ने समारोह का शुभारम्भ करते हुए कहा कि सरकार सत्ता के विकेन्द्रीकरण और जमीनी स्तर पर लोगों की भागीदारी अधिक से अधिक बढ़ाने के लिए वचनबद्ध है। उन्होंने कहा कि इसी उद्देश्य को पूरा करने के लिए विभिन्न ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में ग्राम पंचायतों को भागीदार बनाया जा रहा है और ग्राम सभा के माध्यम से लोगों की सीधी भागीदारी सुनिश्चित की जा रही है।

श्री पटवा ने पंचायतों को मजबूत बनाने के नए–नए उपाय ढूंढने की जरूरत पर जोर देते हुए कहा कि ग्राम पंचायतों को देश की राजनीतिक मुख्य धारा में शामिल होकर अपनी भूमिका जोरदार ढंग से निबाहनी चाहिए। उन्होंने कहा कि चुनावों के बिना लोकतंत्र नहीं हो सकता और बिना राजनीतिक दलों के चुनाव नहीं हो सकते। ग्रामीण विकास मंत्री ने कहा कि मुद्दों पर आधारित चुनावों से कमजोर वर्गों को ज्यादा फायदा होगा। उन्होंने कहा कि ग्राम पंचायतों को सशक्त बनाने के लिए हमें उनके आकार और उनके तहत जनसंख्या के प्रश्न पर भी ध्यान देना चाहिए। उन्होंने कहा कि पंजाब और अरुणाचल प्रदेश में एक पंचायत के तहत जनसंख्या क्रमशः 1200 और 700 है जबकि पश्चिम बंगाल में यह 14,800 और केरल में 21,600 है। श्री पटवा ने कहा कि भारत में इस समय कई बड़े परिवर्तन हो रहे हैं और एक बार देश में उदारीकरण और भूमंडलीकरण की प्रक्रिया पूरी हो जाए तो देश विश्व में बड़ी प्रभावी भूमिका अदा करेगा। उन्होंने कहा कि देश के सम्मुख जो चुनौतियां हैं उन्हें देखते हुए लोगों की भागीदारी पर आधारित विकास की राह को अपनाना होगा। उन्होंने कहा कि हाल ही में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के स्वरूप में परिवर्तन इसी उद्देश्य को लेकर किए गए हैं।

इसी अवसर पर समारोह की अध्यक्षता करते हुए आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री चन्द्रबाबू नायडु ने केन्द्र से अपील की कि वह त्रिस्तरीय पंचायती राज प्रणाली में आवश्यक बदलाव करे।

केन्द्रीय शहरी विकास राज्य मंत्री श्री बंडारू दत्तात्रेय, आंध्र प्रदेश के पंचायती राज मंत्री श्री ए. माधव रेड्डी और ग्रामीण विकास मंत्रालय में सचिव डा. पी.एल. संजीव रेड्डी ने इस अवसर पर अपने विचार व्यक्त किए।

बाद में श्री पटवा ने एक पुस्तक प्रदर्शनी और श्री चन्द्रबाबू नायडु ने एक फोटो और मानचित्रों की प्रदर्शनी का उद्घाटन किया। राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान के चार प्रकाशनों का विमोचन भी किया गया।

'ग्रामीण समृद्धि और कृषि : अगली सहस्त्राब्दी में रणनीतियां और नीतियां' विषय पर एक दो–दिवसीय विचारगोष्ठी का आयोजन भी किया गया।

संविधान की स्वर्ण जयंती और ग्राम पंचायतें

रामनरेश वर्मा

भारतीय गणराज्य का स्वर्ण जयंती वर्ष चल रहा है। पिछले पांच दशकों में मूलभूत परिवर्तन हो चुके हैं। इस अवधि में हमारा गणराज्यीय संविधान समय की कसौटी पर खरा उतरा है। लेकिन 49 वर्ष पूर्व गणराज्य की हमारी अवधारणा में एक गंभीर चूक हुई। हमने इसकी बुनियादी इकाई लघु गणराज्यों यानी पांच लाख से ज्यादा गांवों को महत्व नहीं दिया, जो अपेक्षित था। संविधान के उस हिस्से में जो कानूनी रूप से बाध्यकारी है इन गणराज्यों का कोई उल्लेख नहीं था। नीति–निर्देशक सिद्धांत (अनुच्छेद 40) में कहा गया था कि राज्य ग्राम पंचायतों का गठन करने के लिए कदम उठाएगा।

संविधान के लागू होने के वक्त ही यह कानून बन जाता कि ग्राम पंचायतों का गठन किया जाएगा और उसमें समाज के उपेक्षित, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक अधिकारों से वंचित सदस्यों, खासकर अनुसूचित जाति, जनजाति एवं महिलाओं के लिए स्थान आरक्षित किए जाएंगे। अब जबकि 73वें संविधान संशोधन के बाद पंचायतों के चुनाव कराए गए और लघु गणराज्य की नींव रखी गई है, अगर संविधान बनते वक्त ही यह व्यवस्था हो जाती तो लघु गणराज्य का स्वरूप कुछ और ही होता।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

भारत मुख्यतः गांवों का देश है, ग्रामीण समुदायों की सामाजिक संरचना के तीन मुख्य आधार होते हैं– संयुक्त परिवार, जाति व्यवस्था और ग्राम पंचायत। ग्रामीण समुदायों में पंचायतों का प्रारंभ से ही विशेष महत्व रहा है जो इस बात का सूचक है कि भारतीय जन–मानस की प्रारंभ से ही प्रजातांत्रिक मान्यताओं में गहन आस्था रही है। दसवीं शताब्दी के महत्वपूर्ण ग्रंथ 'शुक्रनीतिसार' में ग्राम पंचायतों के संगठन का विस्तृत विवरण मिलता है। इस ग्रंथ में स्पष्ट है कि ग्राम पंचायतों के सदस्य जनता द्वारा निर्वाचित होते थे। अंग्रेजों ने भी पंचायत व्यवस्था की मुक्त कंठ से सराहना की है। चार्ल्स मेटकाफ ने लिखा है "ग्राम समुदाय छोटे–छोटे गणराज्य हैं जिनमें जो उन्हें चाहिए वह सब कुछ उपलब्ध है। वे अपने मामलों में प्रायः स्वाधीन हैं। जहां कोई चीज नहीं टिक पाती वहां वे टिके रहते हैं। मेरे विचार से समस्त क्रांतियों और परिवर्तन के बीच भारत की जनता के बचे रहने और सुख तथा स्वतंत्रता प्रदान करने का मुख्य कारण यही है।"

स्वाधीनता आंदोलन के दौरान और स्वतंत्रता–प्राप्ति के पश्चात् राष्ट्रीय नेतृत्व का ध्यान पुनः ग्रामीण गणतंत्र की ओर आकृष्ट हुआ और पंचायतों के महत्व को स्वीकारा जाने लगा। राजगोपालाचारी ने ग्राम पंचायतों को ही 'जनक्रांति' का सर्वोत्तम साधन बताया है। महात्मा गांधी ने लिखा है "मेरा ग्राम स्वराज्य या पंचायती राज्य का आदर्श यह है कि प्रत्येक ग्राम एक पूर्ण गणराज्य हो..... उसमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता के आधार पर बना लोकतंत्र होगा। एक अन्य स्थान पर उन्होंने लिखा है "स्वतंत्रता नीचे से प्रारंभ होनी चाहिए। इस प्रकार प्रत्येक ग्राम एक गणराज्य अथवा पंचायत का राज्य होगा उनके पास पूरी सत्ता और ताकत होगी।" श्री पट्टाभि सीतारमइया ने लिखा है "भारतीय राज्य वह ऊंचा महल है जिसका आधार प्रायः पांच लाख पंचायतें हैं जो वास्तव में ग्रामीण गणतंत्र हैं।"

उपर्युक्त ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य और भारत के महापुरुषों के विचारों को पढ़ने से अहसास होता है कि भारतीय ग्रामीण गणराज्य को संविधान में स्थान दे दिया जाता तो हम संविधान की स्वर्ण जयंती और 21वीं सदी में प्रवेश करते वक्त उस सामाजिक व्यवस्था में नहीं होते जो 50 वर्ष पहले थी। आज भी भारतीय समाज व्यवस्था भेद–भाव और असमानता पर आधारित है।

73वें संविधान संशोधन के बाद लघु गणराज्य

भारत के पंचायती राज को संवैधानिक मान्यता देने वाले 73वें संविधान संशोधन के बाद आम जनता की आशाएं बढ़ी हैं। व्यवस्था में भागीदारी की इच्छा प्रबल हुई है और विकास तथा प्रशासन की प्रक्रियाओं के प्रति जागरूकता पैदा हुई है।

मध्य प्रदेश पहला गणराज्य था जिसने 73वें संविधान संशोधन के बाद पंचायतों के चुनाव कराए। परिणामस्वरूप करीब पांच लाख जन–प्रतिनिधि चुने गए। मध्य प्रदेश के इतिहास में पहली बार अनुसूचित जाति/जनजाति वर्ग के 1,44,735 प्रतिनिधि चुने गए। जिनमें से 48,993 स्त्रियां थीं। पिछड़ी जातियों के 82,504 प्रतिनिधि चुने गए इनमें 26,735 स्त्रियां थीं। सामान्य वर्ग से 61,993 स्त्रियां निर्वाचित होकर आईं। यह स्त्रियों की मुक्ति और सशक्तीकरण की दिशा में एक क्रांतिकारी कदम था, जो समग्र विकास की एक अनिवार्य शर्त है। लेकिन वे वास्तव में अपनी मर्जी से आत्म–विश्वास के साथ कार्य नहीं करतीं। अगर वह कार्य करती भी हैं तो वह किसी की सहायता लेकर या किसी के दबाव में आकर कार्य करती हैं। उनके कार्यों में बाधाएं पहुंचाई जाती हैं। अनुसूचित जाति, जनजाति के महिला और पुरुष सरपंचों को अन्य वर्गों के पंचों और ग्रामीणें से कटाक्ष, तिरस्कार और बाधाओं का सामना करना पड़ता है। *नई दुनिया* के सम्पादकीय में छपी खबर के अनुसार अनुसूचित जाति की महिला सरपंचों को ग्राम पंचायत की बैठकों में कुर्सी पर बैठने नहीं दिया जाता। पाली जिले की एक हरिजन महिला सरपंच की शिकायत है कि पंचायत की बैठक में जब वह चाय पीती है तो चाय का प्याला उसे खुद ही धोना पड़ता है, जबकि दूसरे सदस्यों के प्याले चपरासी धोते हैं। 15 अगस्त 1998 को जब आदिवासी सरपंच को दौसा जिले में निर्वस्त्र कर दिया गया और वह जो मिठाई स्वाधीनता दिवस समारोह में बांटने के लिए लाई थी, उसे नाले में फेंक दिया गया। इसी तरह अनुसूचित जाति की महिला सरपंच को गांव में झंडा वन्दन करने से रोक दिया गया और बाद में मुख्यमंत्री के हस्तक्षेप से वह हरिजन महिला सरपंच झंडा वन्दन कर सकी।

मैंने अपने स्वयं के शोध कार्य में पाया कि अनुसूचित जाति के महिला और पुरुष दोनों सरपंच दिन भर तो खेतों में मजदूरी करते हैं और जब पंचायत की कोई बैठक हुई, ग्राम सभा की बैठक हुई या कोई अधिकारी आया तो उन्हें उसी हालत में वहां उपस्थित होना पड़ता है जिसकी वजह से वह ग्रामीणों एवं अधिकारियों पर अन्य वर्गों के सरपचों की अपेक्षा कम प्रभाव छोड़ पाते हैं। दिन भर मजदूरी करते रहने की वजह से उन्हें क्या विकास के कार्य करना है, कितना करना है, कहां–कहां करना है, यह सोचने का समय ही नहीं मिलता। यह सब कार्य अन्य वर्ग के सरपंच करते हैं। वास्तव में अनुसूचित जाति के सरपंच केवल हस्ताक्षर करने के लिए रहते हैं। इससे उनका आगे फिर से सरपंच बनने का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है और उन्हें सरपंच का कार्य करने में अक्षम साबित कर देते हैं। उस पर भ्रष्टाचार के आरोप सिद्ध कर देते हैं और अविश्वास का प्रस्ताव लाते हैं। पिछले पांच वर्षों में जिन्हें अपनी मर्जी से कार्य करने का जो कुछ अवसर मिल रहा है वह साबित कर रहे हैं कि वह भी अन्य वर्ग के सरपंच की ही तरह

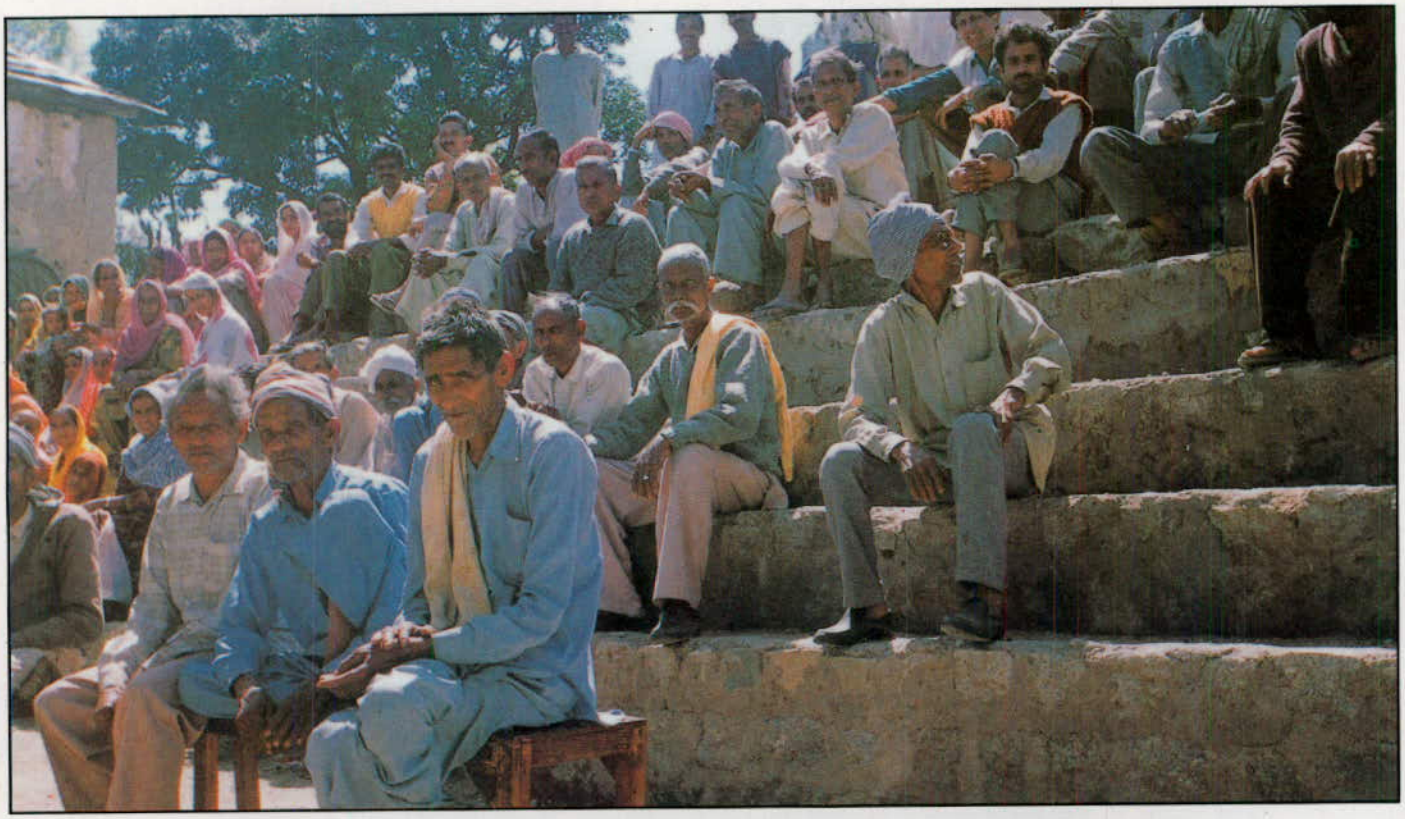

ग्राम सभा की बैठकों में लोगों की ज्यादा उपस्थिति विकास कार्यों में लोगों की बढ़ती रुचि का संकेत

कार्य कर सकते हैं, बशर्ते उन्हें उतनी सुविधाएं, सुरक्षा, साधन मुहैया कराए जाएं जिससे वह विकास कर सकें। सरपंच के पद पर कार्य करने से पहले अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़ा वर्ग के व्यक्तियों के व्यक्तित्व का इतना विकास करना जरूरी है जिससे वह लघु गणराज्य स्थापित करने में अपना योगदान कर सकें।

ग्राम स्तर के लघु गणराज्य स्थापित करने वाले कर्त्ताधर्ता के साथ ही भेदभाव होगा तो लघु गणराज्य कैसा होगा? वर्तमान पंचायत व्यवस्था, ग्रामीण स्तर पर जाति, छुआछूत, भेदभाव आदि संक्रमण के दौर से गुजर रही है। अगले पांच या दस वर्षों में यह व्यवस्था सामान्य रूप से कुछ कम हो जाएगी, बशर्ते कि जन–चेतना जाग्रत करने का एक विराट अभियान चलाया जाए।

राज्य और राष्ट्रीय स्तर के जन–प्रतिनिधि पंचायती प्रतिनिधियों को अपना प्रतिस्पर्धी मानते हुए उन्हें शक्तिशाली होने से रोकना चाहते हैं। पंचायती राज व्यवस्था को सशक्त तथा प्रभावी बनाने के लिए राजनीतिक इच्छा–शक्ति सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इस बात को समझा जाना जरूरी है कि जिले को प्रशासन के तीसरे स्तर के रूप में विकसित करके ही लोकतंत्रात्मक विकेंद्रीकरण को सफल बनाया जा सकता है। पंचायती राज संस्थाओं के पदाधिकारियों तथा विधायकों को चाहिए कि वे अपनी–अपनी परिसीमाओं में ही कार्य करें। पंचायत समिति के अध्यक्ष और विधायक के बीच विकास कार्यों का श्रेय लेने की प्रतियोगिता अवांछनीय है। केंद्र सरकार को चाहिए कि वह पंचायती राज को राज्य सूची का विषय मानकर उपेक्षा न करे।

लघु गणराज्य बनाने के उपाय

ग्राम पंचायतों को लघु गणराज्यों में बदलने के लिए सभाओं और गोष्ठियों का आयोजन किया जाना चाहिए। मंत्रियों और विधायकों को जन सभाओं में शपथ दिलाई जानी चाहिए कि वे पंचायतों को संविधान के अनुसार उनके अधिकार और कोष देने के मार्ग में अवरोध नहीं खड़ा करेंगे। स्कूलों और कालेजों को गांवों के महत्व तथा लोकतांत्रिक प्रक्रिया के माध्यम से उनकी आजादी और स्वायत्तता के विचार को केंद्र में रखकर निबन्ध प्रतियोगिताओं, वाद–विवादों और पद–यात्राओं का आयोजन करना चाहिए। इसमें ग्राम स्तर के लोकतंत्र को लेकर नए–नए मुद्दे सामने आएंगे जिनमें स्त्री मुक्ति का सवाल, जातिगत भेद–भाव, सूचना का अधिकार, चुनाव संहिता की जरूरत और जाति–धर्म अथवा जन्म के आधार पर नागरिकों के बीच मौजूद असमानता की समाप्ति जैसे मुद्दे शामिल हैं।

21वीं शताब्दी की शुरुआत उन शक्तियों को चुनौती देने का अदभुत अवसर है जो हमारे गणराज्य के संस्थापकों के स्वप्न को यथार्थ में बदलने के मार्ग में अवरोधक हैं। पंचायत व्यवस्था अब हमारे संवैधानिक तंत्र का अनिवार्य अंग है। यह लोकतंत्र का विस्तार करती है और उसे जनोन्मुख बनाती है। भारत का गणराज्य इन लघु गणराज्यों के विकास के आधार पर ही संपन्न और सुदृढ़ हो सकता है। वस्तुतः यही उसकी जड़ें हैं। अतः गणराज्य बनाने का पूरा प्रयास करना चाहिए। ❑

लघु कथा

प्रतीक्षा

विजय 'गुंजन'

कविवर प्रवीर "प्रयास" के आठवें अंक की प्राप्ति की प्रतीक्षा में बेचैन थे। यथा समय–सीमा के अतिक्रमण का आज ग्यारहवां दिन था। अब अपने मन की उत्कण्ठा और कोतुहल को दबा पाना उनके वश की बात नहीं थी, अतः उन्होंने संपादक जी को खत लिखा – "आदरणीय संपादक जी, "प्रयास" के आठवें अंक की प्रतीक्षा में आखें पथरा गईं, यथा समय–सीमा को पार हुए भी आज ग्यारह दिन बीत गए पर अंक अब तक हस्तगत न हुआ। क्या उक्त अंक अभी प्रेस में है या फिर विलम्ब से छपने के कारण ऐसा हुआ।"

वस्तुतः बात यह थी कि प्रयास के सातवें अंक में प्रथम पृष्ठ पर ही "आगामी अंक के आकर्षण" शीर्षक के अंतर्गत आने वाली अन्य सामग्री के साथ–साथ उनकी कविता का भी जिक्र था।

तकरीबन आठ–नौ दिनों बाद कविवर प्रवीर के नाम संपादक जी का पत्र आया – "महाशय, उक्त अंक तो सदैव की भांति अपने निश्चित समय पर छपकर प्रेस से आ गया था और यथा समय आप को प्रेषित किया जा चुका है। धैर्य रखें अंक अब पहुंचता ही होगा। डाक की गड़बड़ी की वजह से कभी–कभी ऐसा हो जाता है।" कविवर प्रवीर को संपादक के इस पत्र से थोड़ा संतोष हुआ। एक के बाद दो और दो के बाद तीन दिनों की तरह आगे आने वाले कई दिन बीत गए। प्रतीक्षा की घड़ी लंबी हुई सो होती ही चली गई पर अंक उन्हें हस्तगत न हो सका। अकस्मात् एक दिन राशन खरीदने के क्रम में उन्हें बनिये की दुकान पर "प्रयास" का आवरण पृष्ठ दिखा। बनिया झटाझट उसके अंदर के पृष्ठों को फाड़कर अपने ग्राहकों के लिए उसमें मसालों की पुड़िया बांध रहा था। बेचारे प्रवीर जी यह सब देख सन्न और अवाक थे। पत्रिका के अंदर के तकरीबन बीस–पच्चीस पृष्ठों का फटना अभी शेष था। वे तपाक से पत्रिका हाथ में उठाकर शेष पन्नों को उलट–पुलटकर अपनी कविता खोजने लगे पर उन्हें निराशा हाथ लगी। यह समझते उन्हें देर न लगी कि उनकी कविता के अक्षर – अक्षर कहीं किसी के रसोईघर में जीरा, गोलकी या और किसी अन्य मसाले की गंध से सुवासित हो रहे होंगे। कविवर प्रवीर के पूछने पर बनिये ने बताया – "श्रीमान! यहीं, हमारे बगल में पोस्टमैन साहब का डेरा है। भगवान बेचारे का भला करे। हरेक माह वे इस प्रकार की पन्द्रह–बीस पत्रिकाएं हमारी दुकान पर छोड़ जाते हैं और इसके एवज में हम उन्हें कुछ पैसे दे दिया करते हैं।" ❑

बापू की 102वीं पुण्य तिथि पर

आधुनिक अर्थतंत्र में गांधी जी के विचारों की सार्थकता

डा. एस.सी. जैन

आर्थिक विकास एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें दीर्घकाल में अर्थव्यवस्था की वास्तविक राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है। इस विकास प्रक्रिया के अंतर्गत अनेक वस्तुओं का उत्पादन, प्रचलित वस्तुओं में सुधार तथा विभिन्न उत्पादों में नव परिवर्तन लाए जाते हैं। गांधी जी पूर्ण रूप से व्यावहारिक व्यक्ति थे। उन्हें भारतीय दशाओं का सम्पूर्ण ज्ञान था अतः उन्हीं परिस्थितियों को ध्यान में रखकर उन्होंने जो विचार व्यक्त किए वे काफी सही और प्रभावी सिद्ध हुए। यदि हम गाधी जी की समकालीन परिस्थितियों का अध्ययन करें तो पाते हैं कि उनके विचार निःसंदेह तर्कसंगत थे। गांधी जी आर्थिक विकास के लिए नैतिक मूल्यों को नहीं त्याग सकते थे, यही कारण है कि वे सत्य, अहिंसा और त्याग पर अत्यधिक बल देते थे।

गांधी जी का आर्थिक दर्शन एक शोषण रहित, आत्मनिर्भर तथा विकेंद्रित अर्थव्यवस्था की भावना से उत्प्रेरित था जिसमें ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सर्वांगीण विकास का लक्ष्य सर्वोपरि था। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए गांधी जी साधनों की पर्याप्तता पर जोर देते थे। विशेष रूप से देश की दूरदर्शितापूर्ण समस्याओं के समाधान के संदर्भ में उन्होंने समय–समय पर जो विचार व्यक्ति किए उन्हें ही आर्थिक विचारों के रूप में मान्यता प्राप्त हुई। वर्तमान संदर्भ में गांधी विचारधारा और आर्थिक विकास प्रासंगिक है क्योंकि उनके विचारों की उपयोगिता जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में स्पष्ट दिखाई पड़ती है, विशेष रूप से ग्रामीण लघु और कुटीर उद्योग, विकेंद्रीकरण, आर्थिक समानता, औद्योगिक नीति, ग्रामीण विकास, खादी ग्रामोद्योग, प्रबंध में न्यास सिद्धांत तथा जनसंख्या आदि ऐसे महत्वपूर्ण कार्यक्रम थे, जो आज के बदलते परिवेश में आर्थिक विकास की दृष्टि से उतने ही महत्वपूर्ण हैं। उनका विश्वास था कि ये कार्यक्रम भारत की आजादी के बाद विकासोन्मुख

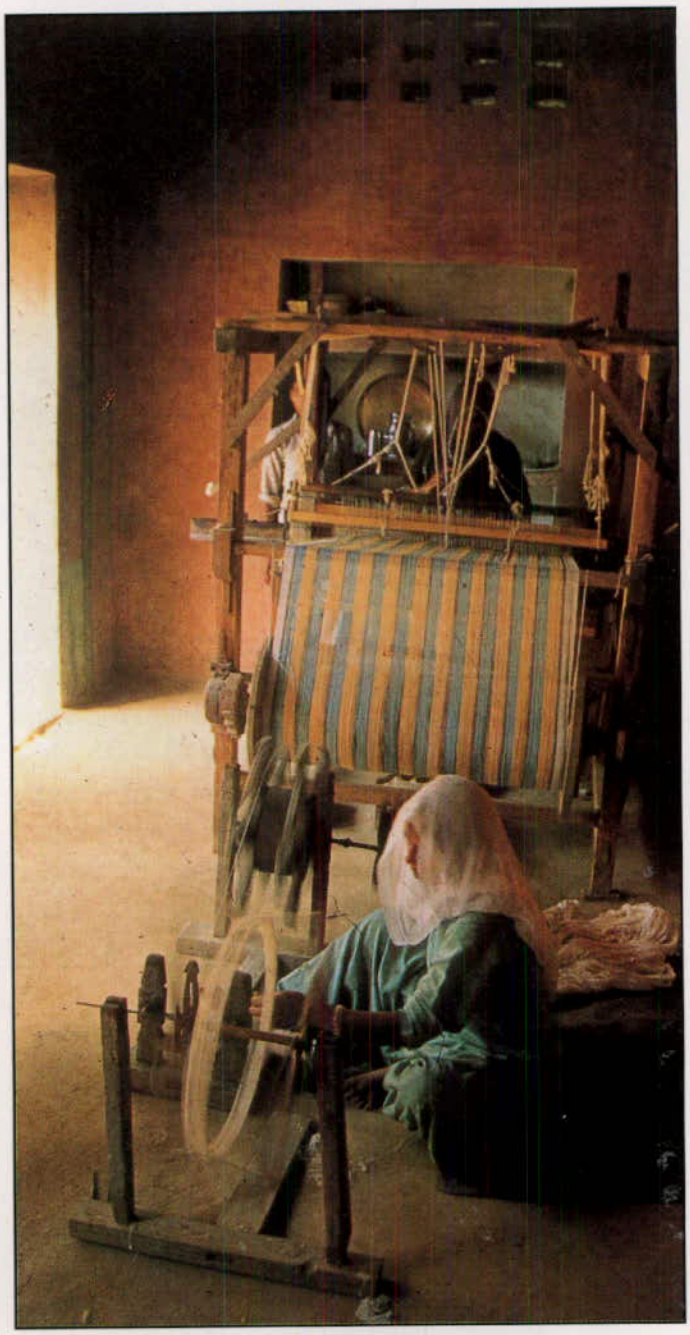

गांवों से बेरोजगारी दूर करने का गांधी जी का अस्त्र : चरखा

प्रगति के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होंगे। प्रस्तुत है गांधी जी के आर्थिक विचारों के कुछ प्रमुख आयाम।

लघु एवं कुटीर उद्योग

गांधी जी वस्तुतः विकेंद्रीकृत औद्योगिक ढांचे के पक्षधर थे। उन्होंने लघु और कुटीर उद्योगों को प्रमुखता प्रदान की क्योंकि ये ऐसे उद्योग हैं, जो प्रत्येक गांव के प्रत्येक घर–परिवार में आसानी से स्थापित किए

जा सकते हैं। इन उद्योगों के माध्यम से देश की निर्धनता और बेरोजगारी जैसी समस्याओं का निदान किया जा सकता है। उन्होंने कृषि उत्पादन बढ़ाने के साथ–साथ लघु और कुटीर उद्योगों तथा ग्रामीण उद्योगों को अपनी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आत्मनिर्भर बनाने पर बल दिया है जिससे क्षेत्रीय विषमताओं को विकेंद्रीकरण के आधार पर दूर किया जा सके। इस प्रकार शोषण–विहीन आत्मनिर्भर और नैतिकता पूर्ण समाज का सृजन किया जा सके, साथ ही श्रम शक्ति का समुचित उपयोग भी हो। वास्तव में गांधी जी मानव को केंद्र बनाकर समृद्धिशाली समाज की रचना करना चाहते थे। उन्हें भय था कि यदि मशीनों को बढ़ावा दिया गया तो मशीन मानव का स्थान ले लेंगी। इसका अर्थ यह नहीं है कि वह वृहद् उद्योगों तथा मशीनों का उपयोग पूर्णतः बंद कर देना चाहते थे, अपितु वह चाहते थे, कि मशीन मानव का स्थान न ले, बल्कि उसे रोजगार के अवसरों से वंचित न कर शारीरिक श्रम से मुक्ति दिलाए और मशीनों का उपयोग तभी करें, जबकि श्रमिकों की संख्या कम हो।

विकेंद्रीकरण

गांधी जी राष्ट्र निर्माण और आर्थिक समानता के लिए विकेंद्रीकरण को आवश्यक मानते थे। उन्होंने कहा कि "मेरा सुझाव है कि यदि भारत को अहिंसा के आधार पर अपना नव–निर्माण करना है तो विभिन्न क्षेत्रों में विकेंद्रीकरण का मार्ग अपनाना होगा जैसी कि मेरी धारणा है, ग्रामीण अर्थव्यवस्था में शोषण के लिए कोई स्थान नहीं है और शोषण हिंसा का ही प्रतिरूप है।" इस कथन में विकेंद्रीकरण की झलक मिलती है। गांधी जी विकेंद्रीकरण अर्थव्यवस्था को आर्थिक समता और प्रजातंत्र का स्नायुतंत्र समझते थे। आर्थिक विकेंद्रीकरण की विचारधारा से प्रायः सभी सहमत हैं, क्योंकि आर्थिक केंद्रीकरण से मूल्य वृद्धि, वर्ग संघर्ष, शोषण, आर्थिक असमानता, भ्रष्टाचार, मानवीय मूल्यों में गिरावट जैसे दोष उत्पन्न होते हैं, जो राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के लिए घातक हैं जबकि विकेंद्रीकरण अधिक व्यावहारिक तथा समतामूलक अर्थव्यवस्था प्रस्तुत करता है। गांधी जी चाहते थे कि उत्पादन का उद्देश्य उपभोग होना चाहिए न कि बड़े–बड़े बाजारों का विस्तार, इस प्रकार उन्होंने आवश्यक उपभोग वस्तुओं के संदर्भ में क्षेत्रीय आत्मनिर्भरता पर अधिक बल दिया, जिससे समग्र विकास हो सके।

आर्थिक असमानता

गांधी जी ने अनेक बार इस बात को दोहराया कि आर्थिक समानता के अभाव में विकास करने की बात सोचना निरर्थक है। इसलिए वे सदैव इस बात पर अत्यधिक बल देते थे, कि आर्थिक साधनों का वितरण यथासंभव न्यायपूर्ण तरीके से ही होना चाहिए। स्वतंत्रता–प्राप्ति के पश्चात इस महत्वपूर्ण विचार को संविधान में यथोचित स्थान दिया गया तथा सरकारी स्तर पर पिछड़े और निर्धनों के जीवन स्तर में सुधार हेतु कानूनी प्रावधानों की व्यवस्था करने की पहल की गई।

आज सभी लोग आर्थिक समानता लाने की बात करते हैं। हमारे देश में भी करोड़ों लोग समाजवादी विचार के हैं, जो आर्थिक असमानता के लिए अमीरों को दोषी ठहराते हैं। अमीरों के विरुद्ध नारे लगाते हैं, हड़ताल करते हैं। लेकिन गांधी जी कहते थे कि इन अमीरों को बनाया किसने? बड़े उद्योगपतियों के कारखानों में तैयार कपड़े, जूते, तेल, साबुन आदि वस्तुएं हम खरीदते हैं, तभी तो ये लोग अमीर हो जाते हैं। यदि हम गरीबों द्वारा अपने बनाए गए कपड़े, जूते, तेल, साबुन आदि वस्तुओं का उपयोग करें तो इस प्रकार का शोषण उद्योगपति नहीं कर सकेंगे। अतएव आर्थिक विषमता के उन्मूलन के लिए यह आवश्यक है, कि हम अपनी प्रवृत्तियों में परिवर्तन करें, जिससे अमीरों और गरीबों के बीच की खाई मिट सके। वास्तव में मानव–श्रम ही देश की पूंजी है अतः सच्ची समानता के लिए गांधी जी ने चरखे को केंद्र बिंदु मानकर एक ऐसी अर्थव्यवस्था की परिकल्पना की थी जिसमें आर्थिक विषमता का नामो–निशान ही मिट जाता है।

ग्रामीण विकास

भारतीय अर्थव्यवस्था का विकास मूलतः ग्रामीण विकास पर निर्भर है। गांधी जी के अनुसार भारत गावों का देश है और अधिकांश ग्रामीणों का मुख्य व्यवसाय कृषि है। भूमि एक प्रकृति प्रदत्त साधन हैं अतः उस पर किसी एक का अधिकार न होकर सम्पूर्ण समाज का अधिकार होना चाहिए। इस दृष्टि से गांधी जी जमींदारी प्रथा का विरोध करते थे। जहां तक कृषि प्रणाली का प्रश्न है, वे सहकारी कृषि के पक्षधर थे। वे गांव को इस तरह संगठित करना चाहते थे कि ग्रामीण अपनी खेती और गृह उद्योग द्वारा स्वयं पूर्ण तथा स्वावलम्बी हो जाएं। ग्रामोद्योगों का विकास ग्रामीण विकास की महत्वपूर्ण शर्तें थीं। गांधी जी का विचार था कि ग्रामोद्योग के लिए देश में ऐसी औद्योगिक नीति होनी चाहिए जो पूंजी, श्रम तथा पूंजी उत्पाद के अनुपातों को सुनिश्चित करें, जिससे विकास के लक्ष्य पूरे हो सकें। गांव के पुनर्जन्म के लिए गांधी जी ने चरखे पर आधारित एक व्यापक योजना प्रस्तुत की, जिसमें चरखा–बेरोजगारी को दूर करने के साथ–साथ खादी के उत्पादन में भी वृद्धि करेगा। गांधी जी चाहते थे कि जब–तक भारत के प्रत्येक गांव के प्रत्येक व्यक्ति को रोजगार नहीं मिल जाता और जब–तक उनको उनके उद्योग वापस नहीं मिल जाते, तब–तक देश का कृषक खुशहाल नहीं हो सकता।

स्वतंत्रता के पश्चात् ग्रामीण विकास के लिए अनेक कार्यक्रम प्रारंभ किए लेकिन उनसे अपेक्षित परिणाम प्राप्त नहीं हो सके। गांधी जी भविष्यदृष्टा थे। उनका मत था कि भारत का आर्थिक विकास बिना ग्रामीण विकास के नहीं हो सकता। उन्होंने भारतीय ग्रामीण जीवन को स्वयं देखा, परखा और ग्रामीण विकास हेतु समय–समय पर जो विचार प्रस्तुत किए उन्हें ही गांधी जी के ग्राम विकास संबंधी विचारों के नाम से जाना जाता है। उत्पादन, उपयोग, विपणन, पशुपालन, साख आदि क्षेत्रों में वे सहकारी समितियों के समर्थक थे। वे पूंजीवाद के विरोधी थे, उनका कहना था कि पूंजीपतियों के पास जो धन है वह समाज की

धरोहर है, वे उसके मालिक नहीं हैं बल्कि केवल न्यासधारी हैं। गांधी जी परिवहन के साधनों द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों को शहरी क्षेत्रों से जोड़ना चाहते थे। इसी प्रकार गांधी जी सादा जीवन, उच्च विचार के आदर्श को मानते थे तथा कहते थे, कि किसी राष्ट्र का वास्तविक धन उसके सभ्य तथा निस्वार्स्थ नागरिकों में होता है।

खादी ग्रामोद्योग

गांधी जी ने आर्थिक आधार पर खादी के प्रयोग पर विशेष ध्यान दिया। उनका विश्वास था कि खादी और सच्चे स्वराज को एक दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता। एक स्वतंत्र राष्ट्र को आर्थिक दृष्टि से भी स्वतंत्र होना चाहिए और खादी का प्रयोग हमें आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाता है। अतः यह कहा जा सकता है कि खादी का प्रयोग हमें स्वराज की ओर ले जाएगा। इसके अलावा गांधी जी कहते थे ग्रामोद्योगों का आधार उचित तकनीक होना चाहिए, क्योंकि ग्रामोद्योग श्रमिक सघन होते हैं और उनमें आत्मनिर्भरता बढ़ती है। इसलिए सीधा मार्ग यही है, कि ग्रामोद्योगों को भली–भांति जीवित किया जाए। हमें अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति गांवों में बनी हुई वस्तुओं से करनी चाहिए। खादी ग्रामोद्योग लाखों ग्रामीणों का एक मात्र आर्थिक साधन है। उनका नारा था "कताई के द्वारा स्वराज" प्राप्त करना और खादी योजना की दिशा में विदेशी धागे और कपड़ों के आयात पर प्रतिबंध लगाना, हथकरघे पर बने कपड़े के मूल्य को नियंत्रित करना, आदि बातें खादी ग्रामोद्योग विकास प्रक्रिया में आवश्यक हैं।

प्रबंध में न्यास सिद्धान्त

गांधी जी आर्थिक विषमता की समस्या का न्याय संगत हल न्यास सिद्धांत के आधार पर चाहते थे। इस सिद्धांत के मूल में गांधी जी के अहिंसा या आध्यात्मिक समाजवाद की झलक मिलती है। यह सिद्धांत गांधी जी के अनुसार अपरिग्रह के सिद्धांत की देन है। न्यास सिद्धांत संचय की मनोवृत्ति को परिवर्तित करने का दर्शन भी है। गांधी जी की परिकल्पना का व्यवसाय प्रबंध, अहिंसा, श्रम और पूंजी के सामंजस्यपूर्ण सहयोग पर आधारित था। एक ओर उन्होंने श्रमजीवी वर्ग के अधिकारों और कर्तव्यों पर बल दिया तो दूसरी ओर व्यवसाय तथा प्रबंध में उनका न्यास सिद्धांत प्रमुख रहा। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सामाजिक दायित्व के निर्वाह की विचारधारा प्रबल होती जा रही है। प्रबंध क्षेत्र के विद्वानों द्वारा इस बात की सहमति प्रगट की गई कि व्यवसाय को अपने सामाजिक दायित्वों का निर्वहन कर न्यायोचित लाभ प्राप्त करना होगा। इस तथ्य की पुष्टि हेतु कंपनी प्रबंध की सार्थकता तभी मानी जा सकती है जब वह विभिन्न पक्षों में सामंजस्य स्थापित कर अधिकतम सामाजिक कल्याण के लिए कार्य करें।

न्यास सिद्धांत आर्थिक समानता को बढ़ावा देने की दिशा में एक रचनात्मक कदम स्वीकार किया गया, लेकिन मुनाफाखोरी की जो आकांक्षा व्यवसाय में दृष्टिगोचर होती है वह सामाजिक असमानता का परिचायक है। इस असमानता को समाप्त करने और गांधी जी के ग्रामोद्योगों की संकल्पना को साकार रूप देने के लिए सतत् प्रयास होने चाहिए।

जनसंख्या

गांधी जी इस पक्ष में नहीं थे कि कृत्रिम साधनों का नियंत्रण किया जाए। उनका विचार था कि देश में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के अनुरूप ही जनसंख्या में वृद्धि होनी चाहिए। उन्होंने जनसंख्या नियंत्रण के लिए ब्रह्मचर्य और संयम पर विशेष बल दिया। उनका विचार था कि देश के सभी लोग अपनी जीविकोपार्जन के लिए श्रम करें तथा कृषि व्यवस्था में उचित भूमिका का निर्वहन करें, तो देश की खाद्यान्न समस्या अपने आप हल हो जाएगी। वस्तुतः खाद्य सामग्री की वृद्धि के अनुपात में ही जनसंख्या की वृद्धि होनी चाहिए। यदि जनसंख्या ऐसे ही बढ़ती रही तो, व्यक्ति की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्या स्थिति होगी? इस समस्या के समाधान के लिए कृषि उत्पादन में वृद्धि, संसाधनों का समुचित विदोहन, ग्रामोद्योग तथा लघु कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन देना होगा तभी देश का आर्थिक विकास संभव है।

गांधी जी उत्पादक रोजगार पर अधिक बल देते थे। उनके आर्थिक विचार देश की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के प्रत्येक पहलू में व्यावहारिकता से ओत–प्रोत थे। निष्कर्ष स्वरूप हम यह कह सकते हैं कि गांधीवादी विचार प्राचीन अवधारणा नहीं अपितु अपरिहार्य रूप से मुक्ति–मूलक तथा वैज्ञानिक अवधारणा है। गांधीवादी आर्थिक अवधारणा का यदि हम वर्तमान भारतीय अर्थव्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन करें, तो उनके आर्थिक विचार आज भी देश की अर्थव्यवस्था के सर्वांगीण विकास की दृष्टि से उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने कि उस समय थे।

संदर्भ

1. एल.सी. जैन 'एसेंस एण्ड रेलेवेंस आफ गांधियन इकोनामिक्स' गांधी मार्ग नई दिल्ली, 1980,
2. वी.पी. नन्दा 'लिगेसी आफ गांधी एण्ड नेहरू' गांधी मार्ग, नई दिल्ली, 1980,
3. टी. आर. शर्मा, 'इण्डस्ट्रियल पैटर्न आफ इण्डिया' कामर्स, मार्च 1996,
4. दूधनाथ चतुर्वेदी, गांधी अर्थनीति, श्यामा प्रकाशन वाराणसी, 1983,
5. ए.वाई. दर्शनकर, 'लीडरशिप इन पंचायतीराज' पंचशील प्रकाशन जयपुर, 1979,
6. आर.के. वेपा, 'दि इकोनामिक थाट आफ गांधी', 1977,
7. वी.सी. सिन्हा, 'आर्थिक विचारों का इतिहास', 1976
8. खादी ग्रामोद्योग पत्रिका, बम्बई, अप्रैल, 1984,
9. 'योजना' पत्रिका, योजना आयोग, नई दिल्ली, अक्तूबर. 94, 95.

साक्षरता और सतत शिक्षा में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका

डा. सुरेन्द्र कुमार कटारिया

मानव–सभ्यता और संस्कृति की विकास यात्रा तथा अद्यतन स्वरूप मनुष्य के बौद्धिक चातुर्य का परिणाम है। निस्संदेह शिक्षा ने इस क्रम में निर्णायक भूमिका निर्वाहित की है क्योंकि शिक्षा का संबंध प्रत्यक्षतः संस्कारों एवं विकासोन्मुखी प्रयासों से है। महात्मा गांधी के अनुसार–"शिक्षा से मेरा अभिप्राय बच्चे या प्रौढ़ के शरीर, मन और आत्मा में विद्यमान सर्वोत्तम गुणों का सर्वांगीण विकास करना है।" स्पष्ट है कि गुण और चेतना व्यक्ति के अंदर स्वाभाविक रूप से विद्यमान हैं। शिक्षा द्वारा इन गुणों तथा चेतना को व्यावहारिक एवं परिमार्जित बनाया जाता है।

साक्षरता अर्थात "अक्षर सहित" का सामान्य उद्देश्य किसी व्यक्ति को लिखने–पढ़ने का सामान्य कौशल तथा ज्ञान प्रदान करना है। यद्यपि शिक्षा–प्राप्ति के लिए साक्षर होना आवश्यक नहीं है तथापि साक्षरता के माध्यम से शिक्षा प्राप्ति सरल तथा अधिक उद्देश्यपूर्ण अवश्य हो जाती है। वर्तमान संचार–क्रांति के युग में साक्षरता, शिक्षा तथा जागरूकता का अन्तर्सम्बन्ध पहले से कहीं अधिक घनिष्ठ हो गया है। चूंकि भारतीय समाज की लगभग आधी आबादी आज भी निरक्षर है। अतः सामाजिक–आर्थिक समस्याओं के प्रसार की गति नियंत्रित नहीं हो सकी है। एक साक्षर तथा शिक्षित व्यक्ति ही अपने राष्ट्र, समाज, परिवार तथा स्वंय के प्रति चेतनाशील और प्रतिबद्ध बन सकता है। इसीलिए साक्षरता कार्यक्रमों के माध्यम से निरक्षरता की समस्या से मुक्ति पाने के प्रयास विश्व भर में किए जा रहे हैं। जहां तक सतत शिक्षा (कन्टीन्यूइंग एजूकेशन) का प्रश्न है वह निरंतर सीखने की प्रक्रिया का एक अंग है। कोई भी व्यक्ति अपने ज्ञान या कौशल का निरंतर उपयोग नहीं करेगा तो स्वतः ही उसकी याददाश्त तथा कौशल धूमिल होने लगते हैं। अतः सतत शिक्षा के माध्यम से पुराने ज्ञान को नवीनता प्रदान करना और नवज्ञान की प्राप्ति को सुनिश्चित किया जा सकता है।

भारत एक लोक कल्याणकारी राज्य है अतः सरकार का यह नैतिक तथा संवैधानिक दायित्व बनता है कि वह नागरिकों के स्वास्थ्य, आवास, रहन–सहन, शिक्षा तथा अन्य जीवनोपयोगी सेवाओं का संचालन सुनिश्चित करे। भारत के संविधान के अनुच्छेद 41 में कहा गया है कि "राज्य अपनी सामर्थ्य और विकास की सीमाओं के भीतर प्रत्येक व्यक्ति के लिए काम पाने, शिक्षा पाने, बेकारी, बुढ़ापा, बीमारी और अंग हानि और अन्य अभावों की दशाओं में सार्वजनिक सहायता पाने के अधिकार को प्राप्त करने का कार्यसाधक उपबन्ध करेगा।" यद्यपि यह व्याख्या संविधान के नीति–निदेशक तत्वों के अधीन की गई है तथापि संविधान यह अपेक्षा करता है कि ये नीति–निदेशक तत्व सरकार के लिए पथप्रेरक और लक्ष्यों का कार्य करें। सन 1976 से पूर्व शिक्षा राज्य सूची का विषय रहा, जो अब समवर्ती सूची में होने के कारण केन्द्र और राज्य दोनों के लिए समान रूप से महत्वपूर्ण हो गया है।

भारतीय शासन व्यवस्था मूल रूप से तीन स्तरों में विभक्त है। शीर्ष स्तर पर केन्द्र सरकार, शासन के अधिकांश विषयों पर नीति, कानून तथा कार्ययोजनाएं तैयार करती है। मध्य स्तर पर राज्य सरकारें अपने–अपने प्रांत में निर्धारित विषयों पर शासन संचालन करती हैं जबकि शासन का धरातलीय स्तर स्थानीय शासन का है। नगरीय तथा ग्रामीण स्थानीय शासन के दो रूपों में विभक्त स्थानीय शासन, जनता की आकांक्षाओं तथा आशाओं का केंद्र बिन्दु है। चूंकि भारत की अधिसंख्य जनता गावों में निवास करती है अतः देश की बहु–आयामी समस्याओं का समाधान भी ग्रामीण संरचना में ही संभव है।

पंचायती राज की अवधारणा तथा कार्य

भारत में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण को मूर्तरूप प्रदान करने के लिए 2 अक्तूबर 1959 को नागौर में पंचायती राज संस्थाओं का शुभारम्भ

प्राथमिक शिक्षा का दायित्व पंचायतों को दे देने से स्कूलों में बच्चों की बढ़ती संख्या

किया गया ताकि स्थानीय व्यक्ति स्वयं के लिए नीति और कार्यक्रम निर्माण कर सकें, उन्हें कार्यान्वित कर सकें, स्वयं ही संसाधनों का प्रबंध कर सकें तथा अपनी कार्यप्रणाली पर स्वनियंत्रण स्थापित कर सकें। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के ग्राम–स्वराज के सपने को साकार करने हेतु विभिन्न राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं का गठन प्रारंभ हुआ। वस्तुतः 2 अक्तूबर 1952 में शुरू हुए "सामुदायिक विकास कार्यक्रम" की असफलता से यह अनुभव किया जाने लगा था कि शासकीय विकास कार्यक्रमों में आम व्यक्ति की सहभागिता सुनिश्चित करने हेतु ठोस प्रयासों की आवश्यकता है। इसी सन्दर्भ में गठित बलवंत राय मेहता समिति की रिपोर्ट की अनुशंसाओं के पश्चात ग्रामीण स्थानीय शासन का आधुनिक स्वरूप गठित हुआ।

प्राथमिक शिक्षा प्रारंभिक दिनों से ही पंचायत समितियों का मुख्य कार्यकारी विषय रहा है। विकास कार्यों के लिए संरचित खंड (ब्लाक) स्तर, शासन के अनेक प्रशासनिक कृत्यों की समन्वय कड़ी बना रहा है क्योंकि यह स्तर गांव तथा जिला के मध्य एक सहज सुलभ स्थल है। राजस्थान सहित बहुत से राज्यों में प्राथमिक शिक्षां तथा साक्षरता कार्यक्रमों को पंचायती राज संस्थाओं का अभिन्न कार्य निर्धारण किया गया है। विगत 30 वर्षों के अनुभव के पश्चात यह तथ्य सामने आया कि पंचायती राज संस्थाएं अपने कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में पूर्ण सफल सिद्ध नहीं हुई हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, आवास, पेयजल, ऊर्जा, परिवहन, कृषि, पशु पालन, ग्राम विकास, सहकारिता तथा कुटीर उद्योगों सहित सामाजिक न्याय की स्थापना के लक्ष्य अभी भी कोसों दूर हैं। अतः संसद द्वारा 1992 में 73वां संविधान संशोधन पारित किया गया जिसमें इन संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान करते हुए निश्चित कार्यवाहक, निश्चित कार्यक्षेत्र, वित्त आयोग की स्थापना, महिलाओं एवं पिछड़े वर्गों को आरक्षण इत्यादि क्रांतिकारी उपबंध किए गए।

राजस्थान पंचायती राज अधिनियम 1994 के अनुसार पंचायती राज संस्थाओं के वर्तमान त्रिस्तरीय ढांचे में शिक्षा तथा साक्षरता से सम्बन्धित निम्नांकित कार्य वर्णित किए गए हैं

(क) ग्राम पंचायत के कार्य (शिक्षा विषयक)

1. समग्र साक्षरता कार्यक्रम के लिए लोक/चेतना प्रोन्नत करना और ग्राम शिक्षा समितियों में भाग लेना।
2. प्राथमिक विद्यालयों और उनके प्रबंध में छात्रों का और विशेष रूप से छात्राओं का पूर्ण नामांकन और उपस्थिति सुनिश्चित करना।
3. प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम को प्रोन्नत करना और उसका अनुवीक्षण।

(ख) पंचायत समिति के कार्य (शिक्षा विषयक)

1. सम्पूर्ण साक्षरता कार्यक्रमों को सम्मिलित करते हुए प्राथमिक शिक्षा, विशेषतः बालिका शिक्षा का संचालन।
2. प्राथमिक विद्यालय भवनों और अध्यापक आवासों का निर्माण, मरम्मत और रख–रखाव।
3. युवा क्लबों और महिला मंडलों के माध्यम से सामाजिक शिक्षा की प्रोन्नति । अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़े वर्गों के गरीब विद्यार्थियों को पाठ्य–पुस्तकें, छात्रवृत्तियां, यूनीफार्म आदि का वितरण करना।
4. सूचना, सामुदायिक मनोरंजन केन्द्रों और पुस्तकालयों की स्थापना, प्रौढ़ साक्षरता का क्रियान्वयन।
5. सामाजिक और सांस्कृतिक क्रिया–कलापों, प्रदर्शनियों, प्रकाशनों की प्रोन्नति।

(ग) जिला परिषद के कार्य (शिक्षा विषयक)

1. उच्च प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना और रख–रखाव सहित शैक्षणिक क्रिया–कलापों को प्रोन्नत करना।
2. प्रौढ़ शिक्षा और पुस्तकालय सुविधाओं के लिए कार्यक्रमों की योजना बनाना।
3. ग्रामीण क्षेत्रों में विज्ञान और तकनीकी के प्रचार के लिए कार्य। शैक्षणिक क्रिया–कलापों का सर्वेक्षण और मूल्यांकन।

स्पष्टतः पंचायती राज संस्थाओं के तीनों स्तरों पर प्रौढ़ शिक्षा, साक्षरता और सतत शिक्षा के प्रसार सहित प्राथमिक शिक्षा की बुनियादी सुविधा की अपेक्षा की गई है। चूंकि ग्राम पंचायतों, पंचायत समितियों तथा जिला परिषदों के जन–प्रतिनिधि स्थानीय क्षेत्र के निवासी होते हैं। अतः वे स्थानीय संस्कृति, मूल्यों, समस्याओं, भाषा, परिवेश तथा जनाकांक्षाओं से भलीभांति परिचित होते हैं इसलिए वे इन पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से साक्षरता कार्यक्रमों को बेहतर गति तथा दिशा प्रदान कर सकते हैं।

प्रगति एवं प्रयास

स्वतंत्रता के समय भारतीय समाज सुविधाहीन, निरक्षर, गरीबी से त्रस्त तथा कुपोषण और निम्न स्वास्थ्य की विविध समस्याओं से ग्रस्त था। योजनाबद्ध आर्थिक विकास के माध्यम से भारत ने शिक्षा सहित अनेक सामाजिक सेवा क्षेत्रों में उल्लेखनीय उपलब्धियां हासिल की हैं तथापि अभी बहुत से सामाजिक लक्ष्य प्राप्त करने शेष हैं। सन 1951 में मात्र 18.33 प्रतिशत आबादी साक्षर थी जिसमें 27.16 प्रतिशत पुरूष तथा 8.86 प्रतिशत महिलाएं सम्मिलित थीं। यही आंकड़ा 1991 में क्रमशः 64.13 तथा 39.29 (कुल 52.21 प्रतिशत) हो गया है। राजस्थान, उत्तर प्रेदश तथा बिहार जैसे प्रदेशों में जहां अभी भी 20 प्रतिशत से कम ग्रामीण महिलाएं साक्षर हुई हैं, वहां पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से साक्षरता और सतत शिक्षा कार्यक्रमों का सफल एवं प्रतिबद्ध संचालन आवश्यक है। यद्यपि स्वतंत्रता के इन 50 वर्षों में भारत ने विज्ञान, चिकित्सा, अंतरिक्ष, रक्षा तथा साहित्य के क्षेत्र में अद्‌भुत उपलब्धियां प्राप्त की हैं तथापि जनसंख्या का एक बड़ा भाग निरक्षर रहना शोचनीय विषय है।

भारत में साक्षरता दर (प्रतिशत)

वर्ष	व्यक्ति	पुरूष	महिलाएं
1951	18.33	27.16	8.86
1961	28.31	40.40	15.34
1971	34.45	45.95	21.97
1981	43.56	58.37	29.75
1991	52.21	64.13	39.29

भारत में शिक्षा के लिए व्यय (राशि करोड़ रू.)

योजना	कुल राशि	प्राथमिक शिक्षा पर व्यय	प्रतिशत	प्रौढ़ शिक्षा पर व्यय	प्रतिशत
प्रथम पंचवर्षीय योजना	153	85	56	—	—
द्वितीय पंचवर्षीय योजना	273	95	35	—	—
तृतीय पंचवर्षीय योजना	589	201	34	—	—
चतुर्थ पंचवर्षीय योजना	786	239	30	—	—
पंचम पंचवर्षीय योजना	912	317	35	—	—
षष्ठ पंचवर्षीय याजना	2530	836	33	224	6
सप्तम पंचवर्षीय योजना	7633	2849	37	470	6
अष्टम पंचवर्षीय योजना	19600	9201	47	3498	9

प्रथम पंचवर्षीय योजना में प्राथमिक शिक्षा पर 58 प्रतिशत राशि व्यय की गई थी जो सातवीं योजना तक 40 प्रतिशत से भी कम रही। इसी कारण देश में प्राथमिक शिक्षा का वांछित प्रसार न हो सका। प्रथम पंचवर्षीय योजना में प्राथमिक शिक्षा पर 85 करोड़ रूपये व्यय हुए जो आठवीं योजना में सौगुणा से भी अधिक हो गए किन्तु साक्षरता की दर में अपेक्षित वृद्धि न होना इस बात का परिचायक है कि शिक्षा के प्रसार में अन्य कई सामाजिक–आर्थिक समस्याएं, बाधाएं उत्पन्न करती हैं।

गरीबी, भारत की एक ऐसी स्थायी समस्या है जो समस्त व्यक्तिगत, पारिवारिक तथा सामाजिक समस्याओं का मूलभूत कारण है। बालश्रम, जुआखोरी, निम्न स्वास्थ्य, जनाधिक्य, निरक्षरता तथा कुरीतियों इत्यादि का सीधा सम्बन्ध निर्धनता से है। यही कारण है कि गरीब ग्रामीण परिवारों के बहुत कम बच्चे प्राथमिक विद्यालयों में नामांकन करवाते हैं और यदि विद्यालय में प्रवेश ले भी लें तो स्कूल छोड़ने की दर बहुत अधिक है। इन्हीं समस्याओं से मुक्ति पाने के लिए आपरेशन ब्लेकबोर्ड

तथा अन्य स्कूल पोषाहार योजनाएं भारत सरकार द्वारा संचालित की गईं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986), कार्य योजना (1986) तथा नई कार्य योजना (1992) के अंतर्गत अनौपचारिक शिक्षा तथा साक्षरता प्रसार के अनेक नवाचारी कार्यक्रम देशभर में संचालित हो रहे हैं। "सबके लिए शिक्षा" के लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु सन् 1979–80 में अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रम शुरू किया गया जिसके अन्तर्गत औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकने वाले बालकों को स्वयं–सेवी संस्थानों के माध्यम से शिक्षा की व्यवस्था की गई। सम्पूर्ण साक्षरता कार्यक्रम के अंतर्गत देश भर में प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र तथा जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (1994) के अंतर्गत सम्बन्धित जिले की परिस्थितियों के अनुसार साक्षरता तथा शिक्षा कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं। राजस्थान में स्वीडन सरकार की सहायता से लोक जुम्बिश (सबको शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए जन अभियान), शिक्षा कर्मी योजना, गुरूमित्र योजना, सरस्वती योजना इत्यादि अनेक साक्षरता कार्यक्रम राज्य साक्षरता मिशन प्राधिकरण द्वारा संचालित किए जा रहे हैं। प्रत्येक साक्षरता कार्यक्रम को सफल बनाने हेतु ग्राम पंचायतों तथा अन्य सहयोगी संस्थाओं के साथ समयानुकूल समन्वय एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

राजस्थान में गठित 9,183 ग्राम पंचायतें, 237 पंचायत समितियां, 31 जिला परिषदें तथा इनके एक लाख जनप्रतिनिधि साक्षरता और सतत शिक्षा कार्यक्रमों के केंद्र बिन्दु हैं। स्थानीय जनता की भावनाओं तथा अपेक्षाओं के प्रतिबिम्ब, इन प्रतिनिधियों की इच्छा शक्ति ही सबके लिए शिक्षा कार्यक्रम की सफलता की कुंजी है।

साक्षरता एवं पंचायती राज : अंतर्सम्बन्ध

पंचायती राज संस्थाएं आम आदमी की आशाओं तथा आवश्यक्ताओं की पूर्ति का सशक्त माध्यम हैं जबकि सम्पूर्ण साक्षरता हमारी तात्कालिक सामाजिक एवं राजनीतिक प्रतिबद्धता है। जहां एक ओर साक्षरता का विशद लक्ष्य केवल पंचायती राज संस्थाओं के योगदान से प्राप्त किया जा सकता है वहीं दूसरी ओर पंचायती राज की सफलता भी साक्षर जनता के प्रतिशत पर निर्भर करती है। पंचायती राज तथा साक्षरता की यह परस्पर निर्भरता अनेकानेक मूलभूत कारकों पर निर्भर करती है जिनका वर्णन करना यहां प्रासंगिक है :

- वस्तुतः पंचायती राज संस्थाएं लोकतंत्र की पाठशाला मानी जाती हैं। शासकीय अधिकारों और कर्त्तव्यों के विकेंद्रीकरण की मांग वर्षों से भारत में उठाई जाती रही है। अतः पंचायती राज के माध्यम से हमने लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की अवधारणा को मूर्तरूप प्रदान किया है। इस प्रकार लोकतांत्रिक मूल्यों की स्थापना तथा लोकतंत्र के प्रसार में पंचायती राज का महत्वपूर्ण स्थान है।
- पंचायती राज का कार्यक्षेत्र गांव–ढाणियों से सम्बद्ध है जहां भारत की दो–तिहाई जनसंख्या निवास करती है। इस विशाल जनसमुदाय तक शिक्षा एवं स्वास्थ्य जैसी मूलभूत सामाजिक सेवाएं केवल पंचायती राज संस्थाएं ही उपलब्ध करा सकती हैं।
- इन संस्थाओं के जन प्रतिनिधि (सदस्य) स्थानीय गांव, कस्बे के निवासी होते हैं। इन सदस्यों का स्थानीय जातियों, वर्गों, समुदायों तथा कुटुम्बों पर व्यापक प्रभाव रहता है। अतः ग्राम पंचायतों, पंचायत समितियों तथा ज़िला परिषदों के सदस्यों के कहने पर आम जनता साक्षरता कार्यक्रमों में अधिक रुचि प्रकट कर सकती है। इन सदस्यों को स्थानीय समस्याओं तथा उपलब्ध संसाधनों का भी स्पष्ट ज्ञान रहता है जो प्रशासनिक कुशलता के लिए आवश्यक है।
- साक्षरता कार्यक्रमों के संचालन के लिए मेले, प्रदर्शनी, नौटंकी, मण्डली, लोकगीत–नृत्य इत्यादि का आयोजन, पंचायतें भलीभांति करवा सकती हैं क्योंकि इन्हें स्थानीय कलाकारों का सहयोग तथा जन सहभागिता प्राप्त होती है।
- ग्राम विकास के अधिकांश कार्य पंचायतों को प्रदत्त किए गए हैं जिनमें गरीबी निवारण, पेयजल और स्वास्थ्य सुविधाएं, राशन–वितरण, परिवहन तथा उद्योगों का विकास और कृषि–सिंचाई विकास इत्यादि सम्मिलित हैं। इन विकास कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन के साथ साक्षरता कार्यक्रम को संलग्न किया जा सकता है।
- साक्षरता एवं सतत शिक्षा के लिए आवश्यक संसाधनों को पंचायतें सहजता से जुटा सकती हैं। सेवानिवृत्त अध्यापकों, बेरोजगार युवक–युवतियों, लोक–कलाकारों तथा स्वयंसेवी संगठनों सहित विद्यालय का प्रबंध यथासमय किया जाना संभव है।
- ग्राम पंचायतों का प्रत्येक व्यक्ति से सम्पर्क रहता है अतः साक्षरता, सतत शिक्षा, उत्तर साक्षरता इत्यादि कार्यक्रमों की मानीटरिंग तथा मूल्यांकन निष्पक्षता एवं सरलतापूर्वक हो सकता है तथा साक्षरता कार्यक्रम के सम्बन्ध में अनुभव की जा रही व्यावहारिक समस्याएं और उनका समाधान भी प्राप्त हो सकता है।
- पंचायती राज संस्थाएं आज भी परम्परागत नौकरशाही के दोषों से मुक्त हैं अतः कार्यक्रमों का संचालन जनता की सहभागिता से करवा सकती हैं।
- पंचायतों के द्वारा क्रियान्वित होने वाले कार्यक्रमों को आम जनता अपना कार्यक्रम समझंती है जबकि सरकारी विभागों द्वारा सम्पादित होने वाले कार्यक्रमों में पूर्ण जन सहभागिता नहीं मिल पाती है। इसी कारण अधिसंख्य विकास कार्यक्रमों की सफलता दर अत्यंत कम है क्योंकि आम जनता सरकारी कार्यक्रमों को थोपा हुआ मानती है।
- साक्षरता का सर्वव्यापी प्रभाव शोषण और दमन से मुक्ति का है। भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना में आज भी महिलाएं, श्रमिक तथा सीमांत कृषक सामाजिक न्याय से वंचित हैं। अतः साक्षरता कार्यक्रमों का संचालन निस्संदेह ग्रामीण परिवेश को परिवर्तित करेगा साथ ही इससे पंचायती राज की कार्य–कुशलता और उपादेयता में वृद्धि होगी क्योंकि साक्षर व्यक्ति अधिक जागरूक होते हैं।
- संविधान के अनुच्छेद 243 जेड डी के अन्तर्गत जिला आयोजना समिति के गठन का प्रस्ताव है। पंचायती राज संस्थाओं तथा नगरीय स्थानीय संस्थाओं के प्रतिनिधियों सहित राज्य अधिकारियों से युक्त यह समिति जिले के संसाधनों के आधार पर विकास

कार्यक्रमों का निर्माण तथा क्रियान्वयन करती है। अतः साक्षरता कार्यक्रम भी इस समिति के द्वारा गति प्राप्त कर सकते हैं।

समस्या और समाधान

भारत में प्राथमिक शिक्षा को एक अधिकार के रूप में स्थापित करने हेतु संसदीय विधेयक प्रस्तावित किया गया है। ऐसी स्थिति में यह प्रश्न अहम हो जाता है कि शासन इस वैधानिक दायित्व की पूर्ति कैसे कर पाएगा? स्पष्ट है वर्तमान कार्यरत प्रशासनिक संरचनाओं के अन्दर ही लोक कल्याणकारी राज्य के लक्ष्य प्राप्त किए जा सकते हैं। साक्षरता तथा सतत शिक्षा के कार्यक्रमों का क्रियान्वयन पंचायती राज संस्थाओं के योगदान पर निर्भर करता है किन्तु इस सम्बन्ध में अनुभूत समस्याओं का निराकरण आवश्यक है।

सर्वप्रथम समस्या यह है कि राजस्थान पंचायती राज अधिनियम 1994 के अर्न्तगत चुनाव लड़ने वाले प्रत्याशियों का साक्षर होना आवश्यक नहीं है। प्रश्न यह है कि जब जन–प्रतिनिधि ही साक्षर नहीं होगें तो साक्षरता कार्यक्रम कैसे सफल हो सकेगा? अतः यह आवश्यक है कि पंचायती राज अधिनियम में तत्काल संशोधन किया जाए ताकि साक्षर तथा शिक्षित व्यक्ति ही चुनाव लड़ सकें तथा साक्षरता कार्यक्रमों को पूर्ण नैतिक सम्बल प्रदान कर सकें। ज्ञातव्य है कि पूर्व पंचायती राज अधिनियम 1956 के अन्तर्गत प्रत्याशी का साक्षर होना आवश्यक था। यही कारण है कि वर्तमान में अनेक महिला पंच निरक्षर हैं जो साक्षरता कार्यक्रम में रुचि प्रकट नहीं कर रही हैं।

दूसरी समस्या पंचायती राज संस्थाओं को प्रदत्त अधिकार, कार्यों और शक्तियों से सम्बन्धित है। ग्राम पंचायतों, पंचायत समितियों तथा जिला परिषदों को पर्याप्त प्रशासनिक शक्तियां नहीं दी गई हैं। सत्ता या प्राधिकारों की कमी के कारण ये संस्थाएं दोषी व्यक्तियों को दण्ड नहीं दे पाती हैं और न ही किसी कार्यक्रम को अपने ढंग से परिवर्तित और कार्यान्वित कर सकती हैं। इस हेतु यह आवश्यक है कि संवैधानिक दर्जा प्राप्त इन अभिकरणों को पर्याप्त सत्ता प्रत्यायोजित की जाए।

तीसरी समस्या पंचायती राज संस्थाओं के राजनीतिकरण से सम्बन्धित है। पंचायती राज संस्थाओं के चुनावों के कारण गांवों का परम्परागत भाईचारा तथा सहयोग प्रवृत्ति, वैमनस्य और कटु संघर्ष में परिवर्तित हो गया है। दो या कई खेमों में विभक्त ग्रामजन सत्तारूढ़ सरपंच तथा पंचों को सम्पूर्ण गांव का सहयोग प्राप्त नहीं हो रहा है अतः पंचायती राज को दलगत राजनीति से ऊपर उठाकर ग्राम विकास और कल्याण के मार्ग पर चलने के प्रयास किए जाने चाहिए।

चतुर्थ समस्या बहुत विकराल तथा व्यावहारिक है। वह यह कि ग्राम पंचायतों के पास वित्तीय स्रोतों का अभाव है जबकि वित्त "आधुनिक प्रशासन का रक्त है।" यद्यपि अधिसंख्य सरकारी कार्यक्रमों का व्यय केंद्र या राज्य सरकारें वहन करती हैं तथापि ग्राम पंचायतों की आर्थिक स्थिति इतनी सुदृढ़ तथा बहुमुखी होनी चाहिए कि कोई भी पंचायत स्वयं की नीतियों, कार्यक्रमों तथा योजनाओं को वित्तपोषित कर सकें। इस हेतु प्रति व्यक्ति कर, मार्ग कर, विवाह तथा जलवा पूजन कर, धनाढ्य कृषक कर इत्यादि लगाए जा सकते हैं। जब ग्राम जनों द्वारा दिया गया कर उन्हीं के लिए विकास कार्यों में प्रयुक्त होगा तो स्वतः ही जन साधारण पंचायत को कर देना स्वीकारेगा।

साक्षरता कार्यक्रमों की सफलता के लिए गुरु का सम्मान आवश्यक है। अतः पंचायती राज संस्थाएं यदि साक्षरता कार्यक्रमों में जुड़े सद्भावी व्यक्तियों तथा स्वयं सेवी–संगठनों का पर्याप्त आदर करें तो यह कार्यक्रम अपना लक्ष्य शीघ्र प्राप्त कर सकेगा।

शिक्षा मनुष्य का सर्वांगीण विकास करती है जबकि साक्षरता के द्वारा शिक्षा प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त होता है। स्वतंत्रता के 50 वर्ष पश्चात् भी लगभग आधी जनसंख्या का निरक्षर होना राष्ट्रीय चिंता का विषय है, इसी कारण साक्षरता, प्रौढ़ शिक्षा तथा अनौपचारिक शिक्षा के कार्यक्रम देश भर में संचालित हो रहे हैं। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की अवधारणा तथा ग्राम विकास के गांधीवादी उद्देश्यों को लेकर शुरू हुआ पंचायती राज भारत में शनैः शनैः सफल होने लगा है। स्थानीय प्रभाव, लोकतंत्र के प्रहरी तथा विकास के आधार स्तम्भ के रूप में स्थापित पंचायती राज, साक्षरता तथा सतत शिक्षा कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में सशक्त संगठन सिद्ध हो सकता है बशर्ते कि पंचायती राज संस्थाओं को अधिक सत्ता, वित्तीय संसाधन, राजनीति से मुक्ति तथा कानूनी संशोधन कर प्रत्याशियों के लिए साक्षर होना अनिवार्य कर दिया जाए। साक्षरता का कोई विकल्प नहीं है। एक कहावत है – "यदि एक वर्ष कोई फसल चाहिए तो एक पौधा लगाइए, यदि दस वर्ष तक फल चाहिए तो एक पेड़ लगाइए किन्तु सदियों तक लाभ चाहिए तो एक व्यक्ति को साक्षर कीजिए।" ❑

लेखकों से

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, कविता, संस्मरण, लघुकथा आदि रचनाएं टाइप कराकर दो प्रतियों में भेजिए। रचनाओं के साथ मौलिकता का प्रमाणपत्र संलग्न होना चाहिए। जिन रचनाओं के साथ ऐसा प्रमाणपत्र संलग्न नहीं होगा, उन्हें स्वीकार नहीं किया जा सकेगा। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाना न भूलें। सभी रचनाएं संपादक, *'कुरुक्षेत्र'*, ग्रामीण विकास मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली–110001 के पते पर भेजें। — **सम्पादक**

कहानी

बचाव–पक्ष

जसविंदर शर्मा

सुबह उठी तो उसकी आंखें सूजी हुई थीं। रात कम्पोज की गोली लेकर सोई थी। सिर भी बहुत भारी–भारी–सा महसूस हुआ।

स्लीपर पहन कर वह बाथरूम गई। कुल्ला किया। आंगन में आकर जम्हाई ली और अंगड़ाई तोड़ते हुए उसने महसूस किया कि अभी आस–पास सभी लोग सोए हुए हैं। किचन में जाकर तीन कप पानी पतीले में डाला। गैस जलाई। पतीला ऊपर रख दिया। चीनी डालते–डालते रुक गई। उसे ध्यान आया कि पिता जी तो फीकी चाय लेते हैं। अब पतीले से हल्की शूं–शूं की आवाजें आने लगीं। उसने चाय–पत्ती का डिब्बा खोला। होंठ कुछ गुनगुनाने लगे। वह चौंक गई। बरसों से वह गुनगुनाना भूल गई थी। उसे खुद पर हैरानी हुई। वह भी क्या वक्त था, जब मां चादर खींच कर दिन चढ़े उठाया करती थी। और वह 'प्लीज मम्मा, सोने दो न' कहती हुई औंधी लेट जाया करती थी। मम्मी भी प्यार भरी डांट लगाते हुए कहतीं, 'उठ ना मेरी लाडो रानी, कालेज नहीं जाना क्या? चाय ठण्डी हो रही है' मगर वह यह कहते हुए चादर छीन लेती थी, 'मुझे नहीं पीनी चाय, हां, सुबह–सुबह उठा देती हैं आप! मुझे नींद आई है, सोने दो न प्लीज, मम्मा प्लीज' यही कुछ सोचते हुए उसने प्याले बनाए। सास–ससुर के लिए अलग ट्रे में रखे और अपना तथा मियां जी का अलग ट्रे में। कई बार वह रख कर भूल जाया करती और दोनों मीठी चाय सास–ससुर के पास ले जाती और फिर सुबह–सुबह सास की डांट पड़ती, 'मोनू, कुछ तो ध्यान रखा करो। डाक्टर ने इन्हें

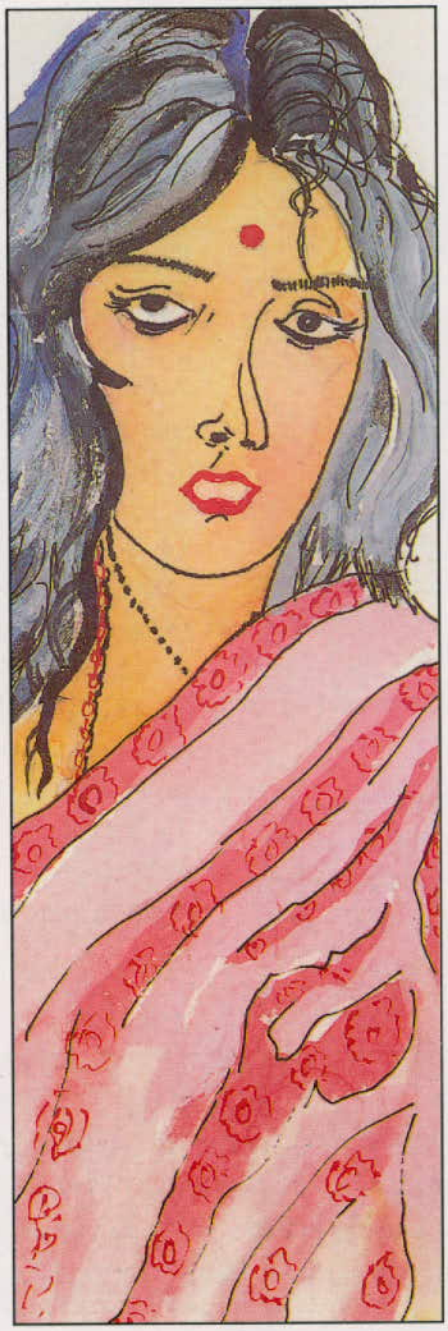

शुगर कम करने को बोला है। अगर तुम इसी तरह इन्हें भी चीनी पिलाती रही तो बस...' ससुर जी को अपनी गलती का अहसास होता तो वे कसमसाकर रह जाते। 'व्यर्थ बताया कि चाय मीठी है। चुपचाप पी लेते।' और फिर पूरा दिन मोनू का कुढ़–कुढ़ कर गुजरता। इसलिए वह चाय ले जाते समय पूरा ध्यान रखती कि कहीं बेकार में पूरा दिन खराब न हो जाए।

अपनी चाय की ट्रे ले जाकर उसने टेबुल पर रखी। खिड़की के पर्दे सरकाए। नाइट बल्ब आफ किया। डोली बिटिया के झूले के पास गई। कैसे आराम से सोई है उसकी डोली बेटी। जी में आया कि वह डोली को जगाए, उसकी प्यारी–तोतली बातें सुने। उसके साथ हंसे–खेले। दिन भर तो घर के कामों में खपना होता है। यही वक्त है कि वह उसे जानवरों की कहानियां सुनाए। शाम को तो डोली जल्दी सो जाती थी। मगर उसने डोली को वहीं आराम से सोने दिया।

उसने अपने पति को उठाने के लिए हाथ बढ़ाया ही था कि अचानक उसके हाथ रुक गए। वह एकटक उसे निहारने लगी। काफी भर गया है विवेक। पहली बार जब उसे देखने आया था, कितना स्लिम था। चेहरा भी कच्चा–कच्चा था। तब छोटी–छोटी मूंछें रखता था। कपड़े भी टाइट पहनता था। सचमुच उस दिन विवेक उसे पसन्द आया था। उसने सपने देखे थे एक लंबे–गोरे, स्मार्ट राजकुमार के, जो मोटी–मोटी मूंछों वाला होगा। खुली–खुली बैगी शर्ट्स पहनता होगा। अन्दाज

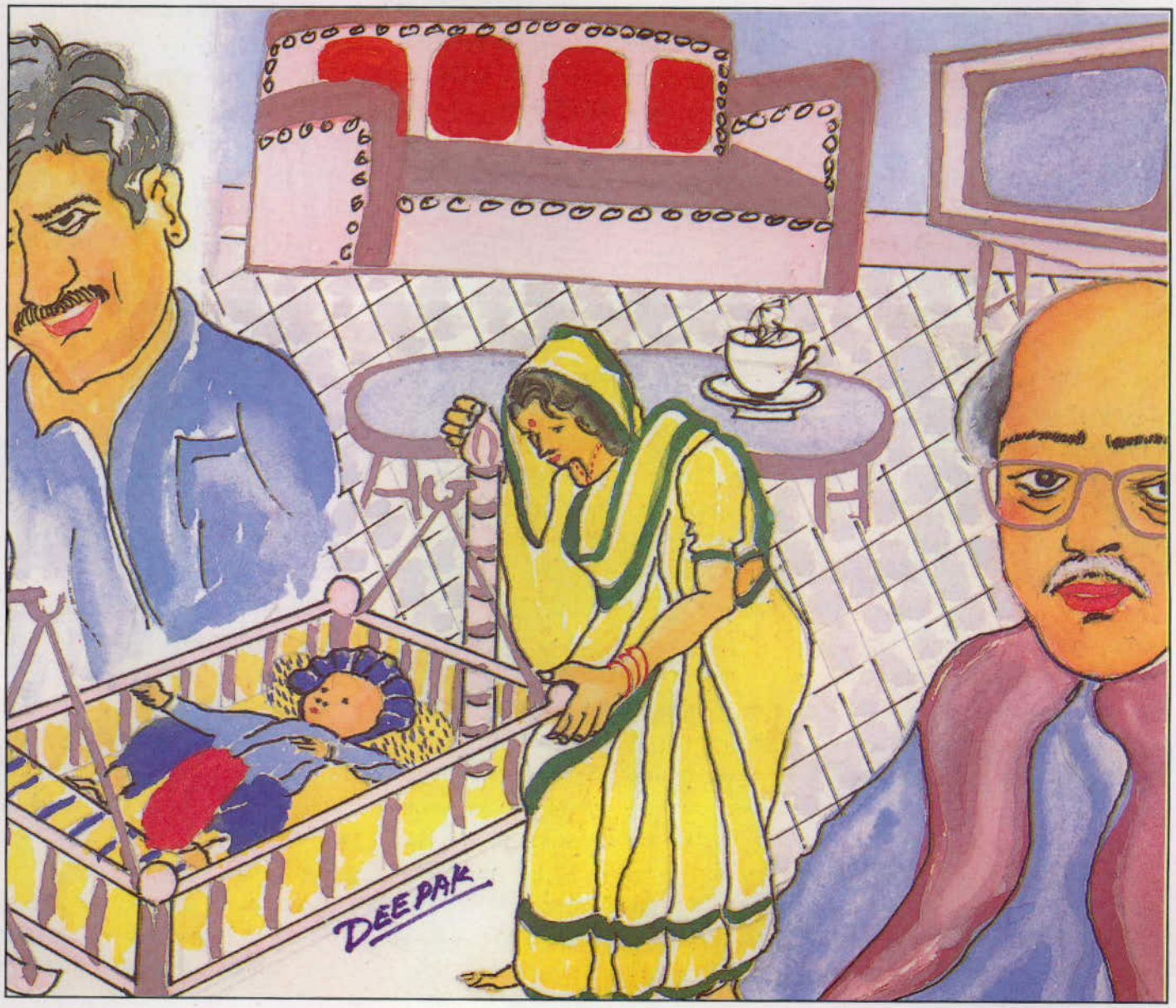

और रौब से बात करता होगा। मगर विवेक नर्वस दिख रहा था। कभी टांग के ऊपर टांग रख कर बैठ जाता तो कभी नाखून चबाने लगता। कोई हंसी की बात होती तो खिसिया कर हंसता और मुंह को हाथ से ढक लेता। मगर विवेक के बारे में बताई गई बातों से वह पहले ही इतनी प्रभावित थी कि नापसन्दगी का तो सवाल ही नहीं उठाता था। बी.ए. फाइनल करते ही घर में उसके रिश्ते की बातें होने लगती थीं। उसे याद आया कि फाइनल एक्जाम्स के दिन ही एक पार्टी उसे देखने आ गई थी। यह उसका पहला मौका था जब उसे बन–संवर कर उनके सामने जाना था। पहले दिन रिहर्सल चलती रही। भैया ड्राइंगरूम में खामोश होकर बैठ जाते, मम्मी–डैडी भी। उसे बेडरूम में एंट्री लेनी होती थी। वह आती, हाथ में चाय और स्नैक्स की ट्रे लिए हुए। सबको इकट्ठा सिर झुका कर 'नमस्ते' बोलती और बीच में मेज पर ट्रे रखकर बैठ जाती। मम्मी डायलाग बोलतीं, 'बेटी चाय बनाओ' और वह बड़े आत्मविश्वास से चाय बनाती। सबको बारी–बारी थमाती, स्नैक्स आफर करती। भैया पूछते, 'अच्छा तो मोनू जी, आजकल आप क्या कर रही हैं?' झट मोनू के मुंह से निकल जाता, 'झक मार रही हूं।' सभी खिलखिला कर हंस पड़ते।

मगर इतनी बार रिहर्सल के बावजूद अगले दिन सब कुछ इसके उलट ही हुआ। वह चाय लेकर आई। मगर विश करना भूल गई। जैसे–तैसे कांपते हुए चाय उसने टेबुल पर रख दी, मगर खड़ी रही। मम्मी ने पुचकार कर उसे अपने पास बिठा लिया। फिर मम्मी ने उसे चाय बनाने के लिए कहा। वह उठी, मगर घबराहट में सबके प्यालों में बिना पूछे डेढ़–डेढ़ चम्मच चीनी मिलाती गई। भैया उसे घूर रहे थे। वह और भी घबरा गई कि शायद कहीं कुछ गलत हो रहा है। लड़का मिलिट्री में कैप्टन था। उसे स्मार्ट लड़की की तलाश थी। सब कुछ व्यर्थ गया। बाद में

मम्मी ने उसे काफी डांटा था। अगले दिन उसका पेपर भी खराब हो गया था। उस साल वह फेल भी हो गई थी।

लड़के अपने मां–बाप के साथ उसे देखने आते, मगर लड़के क्योंकि अफसर थे, इसलिए वे लड़की में विशेष गुणों की अपेक्षा रखते थे। सामने तो लड़का और मां–बाप कह जाते थे कि, 'उन्हें लड़की पसन्द है, जाते ही सलाह करके सूचना देंगे', मगर जाने के कुछ दिनों बाद उसकी फोटो वापस आ जाती और कोई–न–कोई बहाना लिखा होता। कहीं जन्मपत्री में कुछ कमी होती तो कहीं यह बताया जाता कि लड़के की छुट्टी खत्म हो गई हैं। इसलिए अभी फैसला लेने में असमर्थ हैं। कहीं से उत्तर आता कि लड़के को लड़की पसन्द नहीं, क्योंकि लड़की अच्छी तरह अंग्रेजी नहीं बोल सकती।

एम.ए. करने के दो साल बाद भी उसका रिश्ता कहीं 'सैटिल' न हो सका। वह ज्यादातर घर पर ही रहती। बनी–संवरी बैठी रहती। कहीं–न–कहीं से किसी रिश्ते की बात सुना कर पापा, मम्मी को खुश कर देते थे, मगर कहीं लड़का उन्हें पसन्द न आता। वह 28 की हो गई थी, मगर फिर भी उसे पूरी उम्मीद थी कि एक–न–एक दिन उसके सपनों का राजकुमार जरूर आएगा और आकर कहेगा, 'मोनू मुझे पसन्द है, मेरे घरवालों को मेरी पसन्द माननी पड़ेगी।' तभी विवेक के गुणों के चर्चे उसके कानों में पड़े। विवेक बैंक में क्लर्क था। बहनें तो उसकी तीन थीं, मगर सब शादीशुदा थीं। भाई कोई नहीं था। अच्छी कोठी थी उनकी। उसके पिता क्लास वन अफसर रिटायर हुए थे। घर में टेलीफोन, वी.सी.आर., फ्रिज, टी.वी., स्कूटर सब कुछ था। एक विशेष बात जिस पर मम्मी को बहुत खुशी हो रही थी, वह यह थी कि 'लड़के के सर पर किसी किस्म की जिम्मेदारी का बोझ नहीं है। क्लर्क हुआ तो क्या हुआ, प्रोमोशन तो लेने ही वाला था। फिर हमारे दूर के रिश्तेदार हैं– कोई ऊंच–नीच हो जाए तो।'

वह यह सब सोच रही थी कि साथ के कमरे से सास की आवाज आई, 'मोनू, विक्कू नहीं उठा क्या अभी! उसे बोल, जाकर दूध ले आए। फिर मिलेगा नहीं।' जल्दी–जल्दी उसने विवेक को बांह से पकड़ कर हिलाया, "उठो न, सात बज गए हैं, मां जी बुला रही हैं, चाय भी ठंडी हो रही है।" विवेक आंखें मलते हुए उठ बैठा। शिकायत के लहजे में बोला, "तूने रात को उठाया क्यों नहीं?" उसके पास वही पुराना उत्तर था, "खुद तो इतने थके–हारे बेहोश सोए थे आप, कि करवट तक नहीं बदली।" विवेक ने उसे पास खींच लिया था। उसके बालों को चूमा, "बड़े सुन्दर हैं तुम्हारे ये कट, बिलकुल डिम्पल कपाड़िया की तरह।" मोनू के जी में आया कि कह दे, जब मां जी उसके बाल कटवाने पर गुस्सा हो रही थीं तब तो वह उसका बचाव नहीं कर सका था। कितने ताने मिले थे उसे। मगर सब कुछ चुपचाप सह गई थी वह। वह एकदम मूड में आ गया था।

मोनू को भी अच्छा लग रहा था। रात को तो विवेक काफी देर तक ड्राइंगरूम में ही बैठा मां जी से बतियाता रहता और वह बेडरूम में उसके आने का इन्तजार करती रहती। प्यार करने के कुछ क्षण सुबह–सुबह ही मिलते। तभी मां जी की फटकार फिर पड़ी। वह जानती थी कि दूध लेने तो बाऊ जी जाते हैं, मगर किसी बहाने मां जी विवेक को अपने पास बुलाना चाहती हैं कि कहीं बहू उनके खिलाफ उसके कान न भर दे। उन्हें हमेशा यही खटका लगा रहता है। ऐसा ही था तो बेटे की शादी क्यों की। बिठाए रखतीं कुंवारा ही अपनी गोद में। कुढ़ते हुए वह एकदम ठंडी हो गई थी उसकी बांहों में। तभी मां जी ने पुनः पुकारा, "विक्कू!" विवेक फटाफट उठा और अपना चाय का गिलास लेकर जाने को हुआ। मोनू के जी में आया, कहे, 'पत्नी को भी थोड़ा वक्त दे दिया करो।' मगर वह रुक गई। बेवजह विवेक बात का बतंगड़ बना डालेगा और दो घड़ी आराम से पीने को चाय भी नसीब नहीं होगी। जाते–जाते विवेक ने कहा, "तुम भी आ जाओ न उधर!" शुरू–शुरू में वह जरूर बैठती थी उधर। मगर बातों–बातों में उसकी सास कोई–न–कोई ऐसी बात कर ही देती जिससे पूरे दिन उसका कलेजा जलता रहता और अब तो जब से उसके यहां डोली बेटी हुई है, मां जी हमेशा जली–भुनी रहती हैं। हमेशा किसी–न–किसी बात के बाद कह देतीं, "विक्कू के पहला लड़का हो जाता तो कितना अच्छा होता.... फलां ने पहला लड़का जना है.... क्या पता दूसरी भी लड़की ही हो..." बहुत गुस्से में होतीं तो साफ कह देतीं, "बेटा जना होता तो तेरी धौंस सहती!" मगर मोनू विवेक से जिक्र करने की बजाय सब कुछ अपने पर ही झेलती। विवेक तो आफिस चला जाता, मगर वह कुढ़ती रहती। विवेक से कहने का भी क्या फायदा! मां जी के सामने वह ऐसा घुग्घू बन जाता कि जैसे मुंह में जबान ही न हो।

चाय खत्म करते ही वह उठी। आंगन में जाकर उसने बाल्टी में नल खोल दिया। फर्श पर पोंछा लगाने के लिए जैसे ही ड्राइंग रूम में पहुंची, तो मां जी बोलीं, "बुहार–झाड़ू–पोंछा बाद में करना, पहले सब्जी काट के छौंक ले। तेरे बाऊ जी को भी जल्दी जाना है, उमा को लेने।"... तो उमा आज फिर आ रही है। अभी पिछले महीने ही तो वह दस दिन रह कर गई है। एक वह है कि इसी शहर में मायका है, मगर महीना–महीना भर निकल जाता है गए हुए। मम्मी–पापा भी कितने निष्ठुर हो गए हैं। मां जी से यह नहीं कहते कि बेटी को दो–तीन दिनों के लिए भेज दें। जब कभी राखी या भैया दूज पर वह एकाध दिन रुकती है तो पीछे से विवेक का फोन आ जाता है, 'मां जी बीमार हैं' या 'बड़ी ननद आई हुई है, उसे जाना है, जल्दी आ जाओ।'... और वह मम्मी को रोते–बिलखते छोड़ रिक्शा करके वापस आ जाती है। मम्मी कितना कुछ समझाती हैं उसे, कि अलग हो जाओ। विवेक का कहीं तबादला करवा लो। वह उसके सारे दुख सहती हैं। एक वही तो हैं जिनके सामने वह सभी बातें सुनाकर मन का बोझ हल्का कर सकती है। तीन साल हुए हैं शादी को, मगर वह आधी रह गई है। पूरा दिन कुढ़ती रहती है। 'विवेक तो अपना घर छोड़ने को कतई राजी नहीं होगा। बाहर मकान लेकर रहने से उनका, उसकी इस तनख्वाह में

गुजारा कैसे होगा! फिर विवेक में इतना साहस कहां जो मां जी से झगड़ कर अलग हो सके। इतनी बड़ी कोठी। उसका अपना खुला खर्च! फिर उसे तो अपने मां–बाप से कोई शिकायत नहीं है न!'

सब्जी को छौंकने के बाद उसने आटा गूंथना शुरू ही किया था कि डोली के रोने की आवाज सुनाई दी। आटे को वहीं छोड़ उसने हाथ धोए और फटाफट उसे उठाने के लिए भागी। मगर उससे पहले ही मां जी ने उसे उठा लिया था। वह उसे उनसे लेने के लिए बढ़ी ही थी कि मां जी उसे चुप कराते हुए कह रही थीं, "मम्मी गंदी है, उठाती नहीं है मेरी डोली को।" उसके तन–बदन में आग लग गई। बुझे मन से वापस रसोईघर में लौट आई। कितनी कम्बख्त है यह बुढ़िया! कोई काम करो तो ताना, न करो तो ताना! जो उसके इशारों पर नाचे, वह उसे प्यारा लगता है। जो हाथ बांधे हर समय उसका हुक्म बजा लाने में तत्पर रहे, वही खुशी–खुशी इस घर में जी सकता है। कितनी सनकी है– एक काम बोलेगी, मगर कुछ क्षण बाद न जाने क्या सोच कर कहेगी, "मोनू पहले कपड़े धो लेती तो अच्छा था, बारिश का क्या भरोसा! फिर कपड़े नहीं सूखेंगे..." इसलिए मोनू ने अपने दिमाग से काम लेना बन्द कर दिया था। मगर कहीं–न–कहीं मां जी की हरेक बात का विरोध उसके मन के किसी कोने में उठता रहता। वह नौकरानी तो नहीं है कि ये करो, वो करो, वो करो, ये न करो। पढ़ी–लिखी है। मां जी के सामने उसे खुश दिखने का अभिनय भी करना पड़ता, नहीं तो शाम को विवेक से शिकायत होती, "बहू पूरा दिन मुंह फुलाए लेटी रही। खाना भी तीन बजे नसीब हुआ, पता नहीं क्या चाहती है। अलग होना चाहती है तो अलग हो जाए। हम दो जी हैं, एक बार बनाएंगे तो दोनों टेम खा लेंगे।"... पहले तो खाना बनाओ, फिर महारानी को मनाओ। विवेक पर भी तरस आता उसे। वह मां जी की भी सुनता, उसकी भी। शुरू–शुरू में तो उसकी तरफदारी करता, मगर मां जी पूरा घर सिर पर उठा लेतीं। बाऊ जी ज्यादा झमेले में नहीं पड़ते थे। मां जी को डांटते तो मां जी और बिफर जातीं, "हां, सारा कसूर मेरा ही है। इस घर की जितनी फिकर करो, जितना खपो–मरो, मगर घर वालों को जरा कद्र नहीं है। खुद का मन मार–मार कर घर को बनाया है, मगर आज बहू–बेटों को कद्र नहीं। मैं कहती हूं, वे अगर इस तनख्वाह में इतना कुछ कर के दिखाएं तो नाम बदल देना मेरा। रोजाना सैर–सपाटे में कितनी फिजूलखर्ची होती है। बाहर से खा–पी कर लौटते हैं लाट साहब! घर का खर्च तो खींच–तान कर मैं ही पूरा करती हूं।" धीरे–धीरे मोनू ने विवेक के साथ घूमना–फिरना भी बन्द कर दिया था। विवेक कहता भी तो वह कोई बहाना बनाकर टाल जाती। मां जी की चख्–चख् से बच सकने की सदा उसकी कोशिश रहती, मगर उस दिन तो हद ही हो गई थी। उनकी शादी हुए अभी महीना भर ही हुआ था और वे लोग हनीमून से अभी लौटे ही थे। एक सुबह जब वह और विवेक साथ लेटे थे, तभी उनके बेडरूम के दरवाजे पर जोरों की दस्तक हुई। मोनू ने दौड़कर दरवाजा खोला। सामने मां जी खड़ी थीं। उनकी आंखें क्रोध के मारे अंगारे बरसा रही थीं। उन्होंने मोनू को घूरा। डरती हुई मोनू एक तरफ हो गई। मां जी अन्दर आकर विवेक पर उबल पड़ीं, "क्या पूरा दिन बहू की गोद में बैठा रहेगा! सारी उम्र यह तेरे पास ही रहेगी, मगर उमा और उसका पति तो रोज–रोज नहीं आएंगे! जाकर अपनी ससुराल से शादी का कैसेट लाकर उनको दे दे।" उन्होंने यह नहीं कहा कि 'मोनू भी साथ चली जाए तो क्या हर्ज है, पन्द्रह दिन हो गए हैं उसे मम्मी–पापा के पास गए हुए।'

यही कुछ सोचते–सोचते वह खाना बना रही थी। पता नहीं कब, उसके दुपट्टे को आग लग गई। वह एकदम जोर से चीखी और बेहोश हो गई। विवेक, बाऊ जी, मां जी सभी दौड़ आए। मां ने उसे झिझोड़ते हुए कहा, "सही–सलामत तो है न बहू! कहीं कुछ हो गया तो लोग कहेंगे कि सास ने दहेज के लालच में बहू को जला दिया।" ❑

ज़िंदगी का संगीत

हमारे खेतों की मिट्टी
नहीं होती, मात्र मिट्टी भर
उसमें लिखी होती है
हमने भी एक कविता
ज़िदगी के सच की
लहू–पसीने से
अपने अनपढ़ गंवार सपनों के नाम पर
धूप की पीली स्याही से
दोपहर के कागज़ पर

हमारी फसलों की हरियाली
नहीं होती, केवल हरियाली भर
उसमें छिपा होता है
ज़िंदगी का संगीत
जो बैलों के घुंघरुओं की रुन–झुन
मां के लोकगीतों से
पिता की ऊंची हांकों से
बनता है, किसी ढलती शाम को

हमारे खेतों से होकर
कभी नहीं गुजरे हैं
आदमी को आदमी से
बांटने वाले रास्ते
लहू के मज़हब की तरह
खेतों का मज़हब भी
एक ही होता है
हरियाली और रास्ता!

हंसराज भारती

विकास के प्रति ग्रामीण लोगों का दृष्टिकोण

ललित कुमार त्यागी*

भारत जैसे देश में जहां लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या अभी भी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है, ग्रामीण विकास निर्विवाद रूप से एक उच्च प्राथमिकता का विषय है। स्वतंत्रता–प्राप्ति के समय यद्यपि ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक समस्याएं सिर उठाए खड़ी थीं किन्तु साथ ही औपनिवेशिक शासन के बावजूद हमारे पास ग्रामीण विकास हेतु विभिन्न लोगों और संस्थाओं द्वारा चलाए गए अनेक कार्यक्रमों का अनुभव था। अतः हमारे नीति–निर्धारकों को यह समझते देर न लगी कि भारत जैसे विशाल देश में ग्रामीण विकास के लिए एक वृहद कार्यक्रम की आवश्यकता है जिससे पर्याप्त प्रशासनिक ढांचे के साथ ग्रामीण विकास को गति दी जा सके।

इस ध्येय को ध्यान में रखते हुए 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम से ग्रामीण विकास का नया दौर शुरू हुआ। बाद में समय–समय पर विभिन्न समस्याओं और आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए अनेक कार्यक्रम आरम्भ किए गए तथा उनमें परिवर्तन किए गए। हाल ही में प्रो. एस. आर. हाशिम की अध्यक्षता में योजना आयोग द्वारा गठित समिति की सिफारिशों के आधार पर जवाहर रोजगार योजना का जवाहर ग्राम समृद्धि योजना के रूप में पुनर्गठन किया गया है। इसी प्रकार ग्रामीण स्वरोजगार से सम्बन्धित सभी कार्यक्रमों का विलय करके स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना बनाई गई है जिसमें वैयक्तिक लाभार्थियों के बजाय स्वयं सहायता समूह बनाने पर जोर दिया जा रहा है।

इस प्रकार पिछले पचास वर्षों में विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से गांवों में विकास हुआ है किन्तु यह एक निर्विवाद तथ्य है कि प्रतिवर्ष करोड़ों रूपये खर्च करने के बावजूद ग्रामीण विकास की गति बहुत धीमी है। यहां पर ध्यान देने योग्य बात यह है कि ग्रामीण विकास के प्रयासों में टिकाऊपन का अभाव है। उदाहरण के तौर पर गावों में पीने के पानी की समस्या हल करने हेतु हैंडपम्प लगाए जाते हैं किन्तु उनमें से अधिकांश कुछ समय बाद चालू हालत में नहीं रहते, कहीं गांवों को मुख्य मार्ग से जोड़ने के लिए सड़कें बनाई जाती हैं तो बरसात के मौसम में वे शीघ्र ही क्षतिग्रस्त हो जाती हैं। कोई लाभार्थी किसी योजना/कार्यक्रम के तहत रोजगार हेतु सहायता प्राप्त करता है तो बहुधा वह उसका सदुपयोग करके आगे बढ़ने के बजाय उसे अन्य कार्यों में व्यय कर देता है। फलतः उसकी आर्थिक स्थिति में टिकाऊ वृद्धि नहीं हो पाती। इसी प्रकार की बहुत–सी समस्याएं ग्रामीण क्षेत्रों में देखी जा सकती हैं। ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के अपेक्षित रूप में प्रभावी न होने में इनका अपना योगदान है।

अब सवाल यह उठता है कि ऐसा क्यों होता है? ग्रामीण विकास के प्रयास टिकाऊ सिद्ध क्यों नहीं हो रहे हैं? इन प्रश्नों का उत्तर तलाशने के लिए विभिन्न कार्यक्रमों के अनेक मूल्यांकन और शोध किए जा चुके हैं जिनमें कार्यक्रम के स्वरूप तथा नियोजन, उनके क्रियान्वयन में कार्यरत प्रशासनिक तंत्र, ग्रामीण सामाजिक–राजनैतिक व्यवस्था तथा कार्यक्रमों के विकेंद्रीकृत क्रियान्वयन से जुड़े विभिन्न कारकों का विश्लेषण किया गया है। किन्तु एक पहलू जिस पर सबसे कम ध्यान दिया गया है वह है – ग्रामीण लोगों का विकास के प्रति दृष्टिकोण अर्थात् ग्रामीण लोग विकास की प्रक्रिया को किस रूप में देखते हैं तथा इसमें उन्हें अपनी क्या भूमिका नजर आती है? यहां इसी पहलू पर चर्चा की जा रही है।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम से जिस विकास तंत्र की नींव पड़ी थी और उसके माध्यम से बाद में सरकारी सहायता पर आधारित जिस विकास पथ का हमने अनुसरण किया है उससे गांवों की भौतिक स्थिति में तो निस्संदेह बहुत सुधार हुआ है किंतु हमें यह भी स्वीकार करना होगा कि इस प्रक्रिया में गावों की एक अमूल्य निधि का भारी ह्रास हुआ है, और वह है – गांवों की आत्मनिर्भरता और सामुदायिक भावना। यद्यपि आरम्भ से ही नीति–निर्धारकों द्वारा यह आशा की गई थी कि विकास कार्यक्रमों का संचालन इस प्रकार से किया जाए ताकि ग्रामीण जनता उन्हें सरकारी कार्यक्रम न समझे बल्कि उत्साह से

* शोध छात्र, कृषि प्रसार संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

विकास प्रक्रिया में पहल करे तथा सक्रिय भागीदारी निभाए। बलवंत राय मेहता अध्ययन दल की सिफारिशों के आधार पर पंचायती राज व्यवस्था की शुरुआत भी इसी उद्देश्य से की गई थी किंतु तमाम प्रयासों के बावजूद यह ध्येय पूरा नहीं हो सका है।

आज स्थिति यह है कि गांवों से आत्मनिर्भरता का भाव विलुप्त हो चुका है। ग्रामीण लोग छोटी से छोटी जरूरतों के लिए भी सरकारी सहायता पर निर्भर रहते हैं। बहुत से छोटे–छोटे कार्य, जिन्हें ग्रामीण लोग वार्ड स्तर पर या गांव स्तर पर संगठित होकर बिना किसी बाहरी सहायता के कर सकते हैं, पड़े रहते हैं। इससे ग्रामीण विकास को आवश्यक गति नहीं मिल पा रही है। यहां पर यह समझना आवश्यक होगा कि इस रूप में गांवों में आत्मनिर्भरता की बात करने का यह मतलब नहीं है कि गांवों का विकास बिना बाहरी सहायता के किया जा सकता है। गांधी जी ने जिस प्रकार के आत्मनिर्भर गांवों की कल्पना की थी। उनमें भी बाहरी सहायता के लिए उचित स्थान था। किन्तु बाहरी प्रयास तभी सार्थक होंगे जबकि ग्रामीण लोग उन्हें अपना समझेंगे तथा उनकी सफलता में योगदान करेंगे।

आज ग्रामीण लोगों में सरकार पर निर्भरता इतनी अधिक बढ़ गई है कि वे विकास प्रक्रिया में अपने आप को असहाय महसूस करते हैं। उनको लगता है कि गांवों का विकास करना तो सरकार की जिम्मेदारी है, इसके लिए पैसा चाहिए, हम लोग इसमें क्या कर सकते हैं? इस निष्क्रियता का एक प्रमुख कारण शहरों की तरह गांवों में भी सामुदायिक भावना का लगभग समाप्त हो जाना है।

ग्रामीण लोगों में सामुदायिक भावना का तेजी से क्षरण हुआ है, यही कारण है कि आज उनमें विकास कार्यों के प्रति जिम्मेदारी का भाव भी कम होता जा रहा है। ये तथ्य कड़वे भले ही लगते हों किंतु वास्तविकता के बहुत निकट हैं। आम ग्रामीण नागरिक सोचता है कि विकास के बारे में सोचना पंचायतों तथा सरकारी कर्मचारियों का काम है। हमें उससे क्या लेना–देना है।

अब 73वें संविधान संशोधन के माध्यम से विकास प्रक्रिया में ग्रामीण लोगों की भागीदारी बढ़ाने तथा विकास को जन–समस्याओं पर आधारित बनाने की स्वागत–योग्य कोशिश की जा रही है। किंतु यहां पर हमें यह समझना होगा कि उपयुक्त समस्या पंचायतों को अधिकार तथा संसाधन देने मात्र से ही सम्बन्धित नहीं है। यदि हम दुनिया भर में ग्रामीण विकास हेतु किए गए सफल प्रयासों पर नजर डालें तो स्पष्ट होता है कि उनकी सफलता में स्थानीय लोगों के उत्साह और सहयोग का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। बाहरी प्रयास तभी सफल होते हैं जब स्थानीय लोग सामुदायिक भावना से प्रेरित होकर जिम्मेदारीपूर्ण अपनी भूमिका निभाते हैं। इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो पंचायतों को स्थानीय आत्मनिर्भर विकास की प्रभावशाली संस्था बनाने की दिशा में अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

इस लेखक ने हाल ही में पंचायतों के एक अध्ययन में पाया कि पंचायत प्रतिनिधि और आम ग्रामीण नागरिक दोनों की विकास के प्रति सोच में आत्मनिर्भरता के भाव तथा जिम्मेदारी के भाव की कमी थी। पंचायतें स्व–विकास हेतु पहल करें, इसके लिए इस दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना आवश्यक है।

यद्यपि पंचायतों को स्वतंत्रता देना और संसाधन उपलब्ध कराना आवश्यक है किंतु साथ ही लोगों में आत्म–विश्वास पैदा करना, उन्हें जागरूक बनाना तथा विकास प्रक्रिया में उनकी जिम्मेदारी का अहसास कराया जाना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। यदि ग्रामीण लोगों में आत्मनिर्भरता की भावना जगाई जाए तथा वे जिम्मेदारीपूर्वक सामुदायिक हित के कार्यों हेतु संगठित होकर कार्य करने को प्रेरित हों तब ग्रामीण विकास की बहुत–सी समस्याएं तो स्वयं ही दूर हो जाएंगी तथा सरकार द्वारा किए जाने वाले प्रयास भी अधिक प्रभावशली और टिकाऊ सिद्ध होंगे।

अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि एक तरफ तो अनौपचारिक शिक्षा द्वारा स्वंयसेवी संस्थाओं और सामाजिक कार्यकर्ताओं के सहयोग से लोगों में विकास के प्रति जागरूकता बढ़ाई जाए ताकि वे विकास प्रक्रिया में रचनात्मक योगदान कर सकें। दूसरी ओर विकास कार्यों के क्रियान्वयन के तौर–तरीकों में अधिक सरलता तथा लचीलापन लाया जाना भी आवश्यक है ताकि लोगों में विश्वास जगे कि यदि वे अपने स्तर पर अपनी स्थानीय समस्याएं सुलझाने के लिए कोई पहल करते हैं तो उन्हें सरकारी तंत्र का पूरा सहयोग मिलेगा तभी जन–समस्याओं पर आधारित टिकाऊ और आत्म–निर्भर ग्रामीण विकास का सपना पूरा हो सकेगा। ❑

MAHATMA GANDHI CD

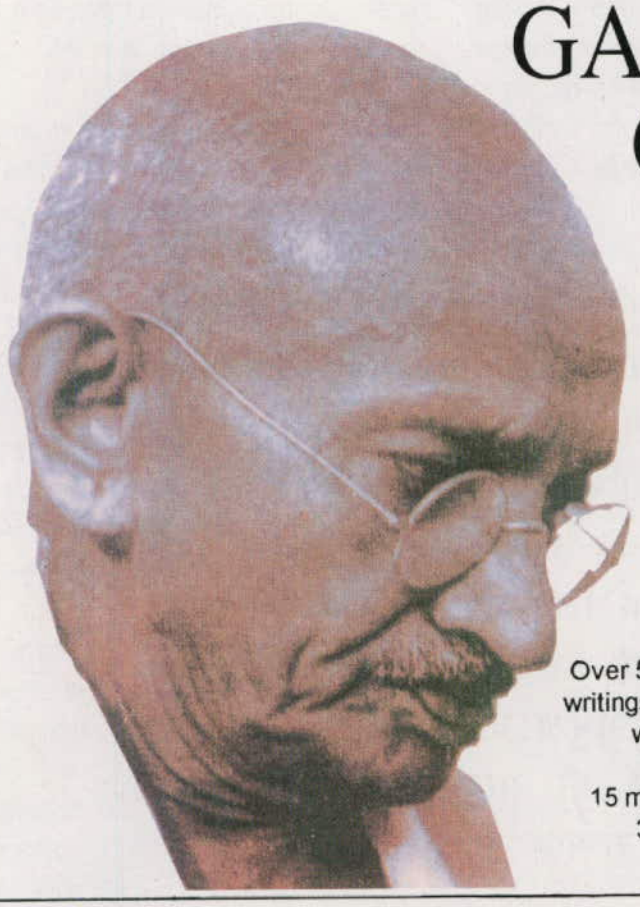

A

comprehensive
Multi-media CD
on Mahatma Gandhi.
Over 50,000 pages of Gandhiji's
writings arranged chronologically
with intensive indexing and
interactive retrieval paths.
15 minutes of Gandhiji's voice.
30 minutes of film footage.

Based on *Collected Works of Mahatma Gandhi* brought out by **Publications Division** in 100 volumes.
Price: Rs.2,500/- per CD.

For business enquiries, contact our sales outlets at:

Patiala House, Tilak Marg, **New Delhi,** Ph.3387983; Super Bazar, Connaught Circus, **New Delhi,** Ph.3313308; Hall No.196, Old Secretariat, **Delhi,** Ph.3968906; Rajaji Bhavan, Besant Nagar, **Chennai,** Ph.4917673; 8, Esplanade East, **Calcutta,** Ph.2488030; Bihar State Cooperative Bank Building, Ashoka Rajpath, **Patna,** Ph.653823; Press Road, **Thiruvananthapuram,** Ph.330650; 27/6, Ram Mohan Rai Marg, **Lucknow,** Ph.208004; Commerce House, Currimbhoy Road, Ballard Pier, **Mumbai,** Ph.2610081; State Archaeological Museum Building, Public Gardens, **Hyderabad,** Ph.236393; 1st Floor, F-Wing, Kendriya Sadan, Koramangala, **Bangalore,** Ph.5537244; CGO Bhavan, A Wing, A.B.Road, **Indore**; 80, Malviya Nagar, **Bhopal**; B-7/B Bhawani Singh Road, **Jaipur.**

बंजर में बगिया खिलाने वाले छोटू खां कायमखानी

देवीसिंह नरूका

अपने द्वारा लगाए गए पेड़ दिखाते हुए छोटू खां कायमखानी

छोटू खां की मान्यता है कि व्यक्ति प्रायः सभी कार्य अपने और अपने परिवार की परवरिश तथा खुशहाली के लिए करता है। किंतु कुछ समय ऐसे काम में भी लगाना चाहिए जिससे अन्य लोगों, समाज और राष्ट्र का भला हो। इस कार्य के लिए छोटू खां ने पेड़ लगाने के काम को चुना है और गत दस वर्षों में राजस्थान के झुनझुनु जिले की मलसीसर तहसील के ग्राम जाबासर और अन्य स्थानों पर वे दस हजार से अधिक पेड़ लगा चुके हैं। इस पुनीत और सराहनीय कार्य के लिए राजस्थान के राज्यपाल न्यायमूर्ति अंशुमान सिंह ने छोटू खां को सम्मानित भी किया है।

जयपुर और मुकन्दगढ़ में प्रापर्टी डीलर का काम करने वाले 67–वर्षीय छोटू खां को पेड़ लगाने का विशेष अनुभव नहीं था किंतु कार्य करने की लगन ने पेड़ लगाने की कला में उन्हें पारंगत कर दिया। शुरू में उन्होंने फल वाले, अच्छी किस्म के मंहगे पौधे लगाए किंतु उनके गांव जाबासर और आस–पास बालू मिट्टी तथा खारा पानी होने के कारण इस प्रकार के अधिकांश पौधे नहीं पनप सके। अतः उन्होंने बेर, बबूल, नीम, खेजड़ी आदि के पौधे बहुतायत से लगाए। इसका नतीजा यह हुआ कि जो क्षेत्र बिल्कुल बंजर था, वहां अब हरे–भरे पेड़ लहलहाने लगे हैं। कार्यानुभव से ही उन्होंने सीखा है कि किस प्रकार के पौधों में कब कितनी खाद दी जाए और दीमक से बचाव कैसे किया जाए।

जयपुर तथा आसपास की पौधशालाओं से अपने खर्चे से पौधे ले जाकर उन्होंने गांवों में निःशुल्क वितरण किया और स्कूल के अध्यापकों और विद्यार्थियों को पेड़ लगाने के लिए प्रेरित किया। पेड़ लगाने में रुचि रखने वाले विद्यार्थियों को होमवर्क का एक अतिरिक्त अंक देने के लिए भी शाला प्रधानाध्यापकों से अनुरोध किया। प्रति वर्ष एक हजार पेड़ लगाने के लक्ष्य की पूर्ति स्वरूप 1988 से अब तक वह 10 हजार से अधिक पेड़ लगा चुके हैं। पेड़ लगाना ही पर्याप्त नहीं है वह इनकी सुरक्षा का भी पूरा इंतजाम करते हैं और पौधों के बड़े होने तक इनकी सिंचाई की व्यवस्था भी करते हैं। छोटू खां ने बताया कि यह सब कार्य वह स्वयं के खर्चे और समाज के सहयोग से करते हैं। सरकार या किसी संगठन की ओर से उन्हें कोई आर्थिक मदद नहीं मिली है।

छोटू खां की मान्यता है कि एक पेड़ एक धर्मशाला के समान है जिसमें हजारों जीव–जंतु पलते हैं, प्राणवायु मिलती है। पर्यावरण को शुद्ध रखने, अधिक वर्षा, जड़ी–बूटियां प्राप्त करने और रेगिस्तान के विस्तार को रोकने के लिए भी पेड़ लगाना जरूरी है। उनकी दृष्टि में इससे बढ़कर पुण्य का कोई और कार्य नहीं हो सकता।

झुनझुनु जिले के ग्राम अलसीसर के इन्द्रचन्द्र केजड़ीवाल विद्यालय में पांचवी कक्षा तक पढ़े छोटू खां किशोरावस्था में ही जयपुर आ गए थे। यहां पर नवाब लुहारू के यहां परवरिश पाई। गवर्नमेन्ट होस्टल में काम कर अंग्रेजी खाने का तजुर्बा हासिल किया। जयपुर के सेन्ट जेवियर स्कूल में 16 वर्ष तक होस्टल के इन्चार्ज रहते हुए विद्यार्थियों के साथ देश के विभिन्न भागों का भ्रमण किया। इन कार्यों में केवल गुजारे लायक ही आमदनी होती थी।

सन् 1970 से छोटू खां प्रापर्टी डीलर का कार्य कर रहे हैं। इस कार्य में होने वाली अतिरिक्त आमदनी का उपयोग वह पेड़ लगाने तथा परिवार और समाज के आर्थिक रूप से कमजोर लोगों की मदद के लिए करते हैं। गांव के स्कूल में पक्का फर्श और समाजोपयोगी अन्य निर्माण कार्य भी करवाए हैं।

छोटू खां को समाज–सेवा की यह प्रेरणा कहां से प्राप्त हुई। यह पूछने पर उन्होंने बताया कि वह मूल रूप से राजपूतों के चौहान वंश के हैं। सन् 1315 ई. के आस–पास फिरोहशाह तुगलक के समय में उनके पूर्वज गोगाजी के वंशज कर्मचंद चौहान ने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था। कर्मचंद से उनका नाम कायम खां रखा गया और वह उसी कायमखानी परिवार के हैं। उनके पूर्वजों ने झुनझुनु, नवलगढ, फतेहपुर आदि स्थानों पर कुंएं, बावड़ी, धर्मशालाएं बनवाईं, बीड़, गौचर भूमि तथा मंदिरों के निर्माण में भी सहयोग दिया। संभवतः यही सुसंस्कार हैं जो छोटू खां को समाज सेवा के लिए प्रेरित करते हैं।

छोटू खां को गर्व है कि पेड़ लगाना तथा समाज–सेवा ही उनका परम धर्म और पूजा है। ❑

ग्रामीण क्षेत्रों में ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों की संभावनाएं

डा. दिनेश भणि

यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि आधुनिक जीवन–शैली ऊर्जा के अधिकाधिक उपभोग पर आधारित है। इसीलिए विश्व–स्तर पर ऊर्जा की खपत में निरंतर वृद्धि हो रही है। लेकिन परंपरागत ईंधन के भंडार सीमित हैं। अतः ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों की तलाश जरूरी है। हमारे देश की कुल जनसंख्या का लगभग 74 प्रतिशत भाग ग्रामीण क्षेत्रों में रहता है। इन ग्रामीण लोगों द्वारा ऊर्जा की जो कुल खपत की जाती है, उसके लगभग 90 प्रतिशत भाग में गैर–वाणिज्यिक ईंधन शामिल हैं, जैसे–जलाने की लकड़ी, गोबर और कृषि अवशेष। गैर–वाणिज्यिक ईंधन देश में उपयोग किए जाने वाली कुल ऊर्जा के 40 प्रतिशत भाग से अधिक है।

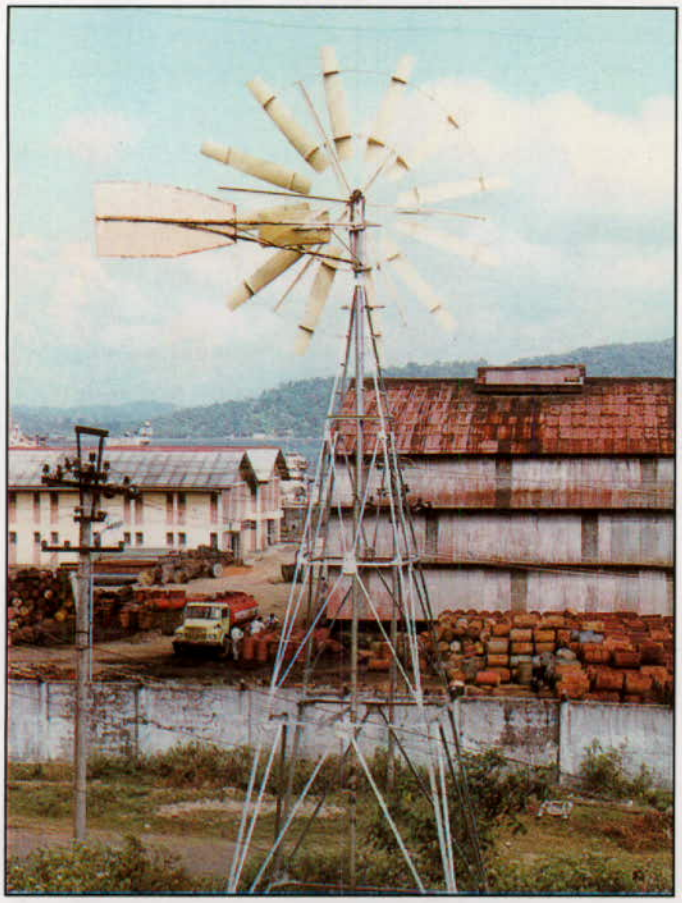

ऊर्जा परम्परागत स्रोतों के घटते भंडार और बढ़ते मूल्यों के युग में एकमात्र सहारा : ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत

ऊर्जा के परंपरागत साधनों के निरंतर बढ़ते मूल्यों और उनके उपलब्ध होने में कठिनाइयों के कारण, सारे विश्व का ध्यान ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों की ओर आकर्षित हुआ है।

ग्रामीण विकास में ऊर्जा के वैकल्पिक साधन सौर–ऊर्जा, बायोगैस ऊर्जा, बायोमास ऊर्जा, पवन ऊर्जा आदि हैं। साथ ही उन्नत चूल्हों द्वारा भी ईंधन का बेहतर उपयोग होता है। इनमें से सौर–ऊर्जा अत्यंत उपयुक्त प्रतीत होती है। इसका स्रोत सूर्य है, जिसकी ऊर्जा अनंत है। सौर–ऊर्जा निरंतर मुफ्त मिलने वाली प्रदूषण रहित ऊर्जा है। यह भारत में अधिकतर क्षेत्रों में लगभग 300 दिनों तक पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध रहती है। कृषि के क्षेत्र में इस ऊर्जा स्रोत का निम्न कार्यों के लिए सफलतापूर्वक इस्तेमाल किया जा रहा है:

- सौर–ऊर्जा के उपयोग से फसलों, फलों और सब्जियों को सुखाना
- सौर–ऊर्जा पम्प के उपयोग से फसलों की सिंचाई
- सौर–ऊर्जा शीतक द्वारा फलों और सब्जियों का भण्डारण
- खराब और क्षारीय जल का शुद्धिकरण
- सौर–हीटर द्वारा पानी को गर्म करना और खाना पकाना
- ग्रीन हाउस तकनीक द्वारा फसलों का नियमित तथा अधिक उत्पादन

ग्रामीण विकास को द्रुतगति प्रदान करने तथा ग्रामीणों के स्वास्थ्य तथा उन्हें आर्थिक लाभ पहुंचाने में बायोगैस संयंत्रों की भूमिका को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। भारत एक कृषि प्रधान देश है तथा यहां के किसान बड़ी संख्या में पशु–पालन करते हैं। बायोगैस संयंत्र से चलने वाला चूल्हा धुंआ रहित होता है और इस संयंत्र से निकली हुई खाद की उर्वरा शक्ति अधिक होती है। बायोगैस संयंत्र से प्रकाश की समस्या भी हल हो जाती है। यह ऊर्जा समस्या के समाधान प्रस्तुत करने के अलावा व्यर्थ जा रहे अवशिष्ट पदार्थों का इस्तेमाल करके प्रदूषण कम करने में भी सहायक है। वैज्ञानिकों के अनुसार 27 घन मीटर बायोगैस से प्राप्त होने वाली ऊर्जा 16.2 घनमीटर प्राकृतिक गैस, 29 लीटर ब्यूटेन, 24 लीटर गैसोलीन (पेट्रोल) अथवा 21 लीटर डीजल तेल के समतुल्य होती है।

बायोमास ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ती हुई ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने का सबसे आसान तरीका है। इसे सीधे दहन करने, कार्बनीकरण, तरलीकरण, गैसीकरण तथा अन्य रूपान्तर प्रणालियों के माध्यम से ठोस, तरल तथा गैसीय रूपों में प्रयोग किया जा सकता है। ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों में बायोमास ऊर्जा का प्रयोग नया नहीं है, किंतु इस ओर वैज्ञानिकों के नए सिरे से आकर्षित होने का कारण यह है कि इस स्रोत की निरंतरता बनी रहती है तथा इसका पुनर्नवीकरण भी संभव है। ऊर्जा की पूर्ति की दृष्टि से लगाई जाने वाली फसलों के लिए दो प्रमुख निर्णायक शर्तें हैं– उनकी शीघ्र वृद्धि क्षमता और अधिकतम उत्पादन। बायोमास की अनेकानेक संभावनाओं को पहचान कर उनके लिए नई तकनीकें और उपयोग की विधियां ढूंढ़ी जा चुकी हैं। बायोमास में अंतर्निहित सम्पूर्ण ऊर्जा–शक्ति यदि व्यवस्थित साधनों से सफलतापूर्वक प्रयोग में लाई जा सके तो वह निकट भविष्य में हमारी ऊर्जा सम्बन्धी मांगों के 57 प्रतिशत की पूर्ति करने में समर्थ सिद्ध होगी। आजकल यह अनुभव किया जा रहा है कि जिस प्रकार अनाज, सब्जी, फलों आदि के लिए खेती की जाती है, उसी प्रकार बायोमास की खेती की जाए और इसीलिए कभी–कभी ऊर्जा की खेती जैसे शब्दों का प्रयोग भी किया जाता है। ऐसे पौधे जिनमें अधिक ऊर्जा देने की क्षमता है उनमें गन्ना, ज्वार, यूफोबिया, कसावा, सोयाबीन, सूरजमुखी, ईंधन की लकड़ी वाले पौधे, नेपियर घास और जलकुम्भी प्रमुख हैं। यूफोबिया मदार, जोजोबा आदि से अनेक प्रकार के पदार्थ जैसे वनस्पति–क्षीर, रेजिन हाइड्रोकार्बन आदि प्राप्त होते हैं जो रासायनिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सक्षम हैं। शीघ्र उगने वाले पौधों से भूमि के निश्चित क्षेत्रफल से अधिक मात्रा में बायोमास मिल सकता है। शीघ्रता से बढ़ने वाले इन पौधों में पापूलर, सदर्नबीच, एल्डर, विलो और यूकेलिप्टस आदि प्रमुख हैं। सुबबूल, (ल्यूसीना ल्योकोसे पैला) जिसे "मिरेकिल ट्री" "वण्डर ट्री" नाम से जाना जाता है, लवणीय, पथरीली तथा पहाड़ी मिट्टियों में भी लगाया जा सकता है। यह इमारती लकड़ी, ईंधन, पशुचारा आदि के लिए उपयुक्त है। इसके अतिरिक्त यह कागज, गोंद, चारकोल, रंग आदि बनाने में प्रयुक्त होता है। बायोमास के अन्य स्रोतों में वनों तथा कृषि कार्यों से उपलब्ध होने वाले अवशिष्ट पदार्थ आते हैं। कृषि प्रधान देश होने के कारण अवशिष्ट और बायोमास ऊर्जा के भण्डार पूरे देश में उपलब्ध हैं और जब तक खेती होती रहेगी, ये भी अवशिष्ट के रूप में उपलब्ध होते रहेंगे।

ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों में पवन ऊर्जा का उल्लेखनीय स्थान है। वेग से बहते पवन में अत्यधिक ऊर्जा समाई होती है। पवन चक्कियों द्वारा इसी ऊर्जा को प्राप्त करके अन्य प्रकार की ऊर्जाओं में परिवर्तित कर लिया जाता है। पवन ऊर्जा के पक्ष में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि ऊर्जा का यह साधन सबसे सस्ता, सुलभ और प्रदूषणरहित है। हमारे देश में कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल, राजस्थान, और हिमालय के पर्वतीय प्रदेशों में पवन ऊर्जा का प्रयोग असीमित संभावनाओं से युक्त है। केंद्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर के वैज्ञानिकों ने पवन चक्की से कुंओं से पानी खींचने की युक्ति विकसित की है। साथ ही कम क्षमता वाले जेनरेटरों से बिजली भी पैदा की जा सकती है। इस संस्थान में एक परदेदार पवन चक्की का निर्माण किया गया है। इसके चक्र का व्यास 6.7 मी. है जो कि आगे–पीछे चलने वाले पम्प को चलाकर 3.5 मी. गहराई से 1000 से 1200 लीटर प्रति घण्टे की गति से पानी निकाल सकती है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि इन वैकल्पिक स्रोतों के कुशल उपयोग से ग्रामीण क्षेत्रों में सस्ती और प्रदूषणरहित ऊर्जा मिल सकती है जिसके उपयोग से ग्रामीण लोग अपना जीवन स्तर बेहतर बना सकते हैं और एक प्रदूषण–मुक्त खुशहाल भारत का निर्माण कर सकते हैं। ❑

(पृष्ठ 9 का शेष) **नई सरकार और ग्रामीण-क्षेत्र**

जमीन पर आएं, यथार्थ का दामन पकड़ लें, तभी इनसे देश की दरिद्र और ग्रामीण जनता लाभान्वित होगी और देश अगली शताब्दी और सहस्राब्दी में एक नए अंदाज, और नई मनःस्थिति से प्रवेश करेगा। नई सदी में कदम रखते हुए हमें महात्मा गांधी के उस आदर्श से अनुप्राणित होकर काम करना होगा, जो उन्होंने भारत की आजादी से कहीं पहले हमारे लिए, हमारे संविधान निर्माताओं और परवर्ती सरकारों के लिए रखा था। 1931 में गांधी जी द्वारा अंकित शब्द, रह रहकर पीढ़ी–दर–पीढ़ी लोगों को अनुप्राणित करते और राह दिखाते रहेंगे। इनका एक–एक शब्द हम सबके लिए अमर उद्‌बोधन बन गया है। उन्होंने लिखा था "मैं एक ऐसे संविधान के लिए संघर्ष करूंगा जो भारत को सब बंधनों और सहारों से मुक्ति दिलाए। मैं एक ऐसे भारत के लिए काम करूंगा जिसमें गरीब से गरीब व्यक्ति यह महसूस करे कि यह उसका देश है, जिसके निर्माण में उसकी प्रभावशाली भूमिका रही है। एक ऐसा महान भारत, जिसमें न कोई ऊंचा वर्ग होगा और न कोई नीचा वर्ग, एक ऐसा भारत, जिसमें सभी समुदाय पूरी तरह मिलजुल कर रहेंगे – यही है मेरे सपनों का भारत।" ❑

कुपोषण के सामाजिक–आर्थिक परिणाम

मैथिली मनोहरन

पंडित नेहरू ने कहा था – **"बच्चे देश का भविष्य हैं।"** लेकिन क्या हम ऐसे बच्चों का विकास कर रहे हैं जिनसे देश के भविष्य का निर्माण हो सके? क्या हमारे देश के बच्चों, विशेषतः निर्धन वर्गों के बच्चों को दिन में दो बार ठीक से भोजन मिल पाता है? कहीं उनमें से अधिकांश बच्चे जीवन भर बीमार और अस्वस्थ रहने के लिए ही तो अभिशप्त नहीं हैं?

आइए, पहले कुछ आंकड़ों पर नजर डालें। हमारे पास अधिकृत आंकड़े 1991 की जनगणना के ही हैं। शेष सभी आंकड़े केवल अनुमानों पर आधारित हैं। 1991 की जनगणना तक हमारी आबादी लगभग 87 करोड़ तक पहुंच चुकी थी। इसमें 15 वर्ष से कम आयु के बच्चों की आबादी लगभग 36 प्रतिशत थी अर्थात् प्रत्येक पांच व्यक्तियों में से दो 15 वर्ष से कम आयु के थे। दूसरे शब्दों में 1991 तक देश में बच्चों की संख्या 30 करोड़ से अधिक हो गई थी। भारत सरकार के महिला और बाल विकास विभाग ने दक्षिण एशियाई बच्चों के बारे में सार्क देशों के मंत्रियों के तीसरे सम्मेलन के अवसर पर अगस्त 1996 में भारत के संबंध में एक रिपोर्ट प्रकाशित की थी। इस रिपोर्ट के अनुसार, देश के 25 करोड़ लोग कुपोषित पाए गए हैं। रिपोर्ट में कहा गया है कि शिशुओं, विद्यालय जाने से पूर्व की आयु के बच्चों, अन्य बच्चों आदि में कुपोषण पाया गया है। ये सभी बच्चे प्रायः सामाजिक – आर्थिक दृष्टि से निर्धन वर्गों के हैं।

कुपोषण के सामाजिक परिणाम

किसी देश में बड़ी संख्या में कुपोषित व्यक्ति हों तो इसका मतलब है कि वह देश पिछड़ा हुआ है। इसीलिए कुपोषण की समस्या को युनिसेफ ने 'मौन आपात स्थिति' कहा है। जो समाज लोगों को पौष्टिक आहार देने जैसी मूलभूत आवश्यकता की पूर्ति भी नहीं कर सकता तो उसे पिछड़ा हुआ ही कहा जाएगा। कुपोषण के गंभीर सामाजिक परिणाम सामने आते हैं क्योंकि इससे कई प्रकार की समस्याएं जन्म लेती हैं जिन्हें मुख्यतः निम्न रूप में पहचाना जा सकता है –

शारीरिक एवं मानसिक विकलांगता में वृद्धिः यों तो कोई भी व्यक्ति विकलांग हो सकता है, किंतु पौष्टिक आहार न मिलने से व्यक्ति के मन–मस्तिष्क और शरीर दोनों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इससे शारीरिक तथा मानसिक दोनों ही प्रकार के विकलांगों की संख्या बढ़ जाती है जिसका दुष्प्रभाव अंततः समाज पर पड़ता है, क्योंकि विकलांग व्यक्ति सामान्य व्यक्तियों की तुलना में कहीं अधिक कमजोर होता है।

युवा–वृद्धों की पीढ़ी का जन्म : चुंकि कुपोषित व्यक्ति जीवन–भर अशक्त रहने के लिए अभिशप्त होता है, इसलिए ऐसा व्यक्ति युवावस्था में ही वृद्ध हो जाता है। प्रायः उसकी मृत्यु भी जल्दी होती है। भारत में प्रतिवर्ष लगभग 19 लाख शिशुओं की मृत्यु होती है। इनमें से अधिकांश मां को पौष्टिक आहार न मिलने के कारण अशक्त पैदा होते हैं और जल्दी ही चल बसते हैं या फिर स्वयं ही पोषाहार के अभाव के कारण मृत्यु की

बच्चे कमजोर तो कल का भारत कमजोर

गोद में सो जाते हैं।

परिवार एवं समाज पर बोझ : कुपोषित व्यक्ति प्रायः अपने परिवार के लिए बोझ बन जाता है, क्योंकि वह परिवार के सामान्य सदस्यों की तरह सक्रिय नहीं होता। परिवार समाज की सबसे छोटी इकाई है, लेकिन यदि अनेक परिवारों में कुपोषित व्यक्ति हों तो स्पष्ट है कि वे समाज के लिए भी बोझ बन जाते हैं। वे समाज से लेते ही लेते हैं और उससे लेने के मुकाबले देते बहुत कम हैं।

संतानों पर दुष्प्रभाव : जो व्यक्ति कुपोषित होगा, स्पष्ट है कि उसकी होने वाली संतानें भी अस्वस्थ और कुपोषित होंगी। यदि मां गर्भावस्था के दौरान कुपोषित रहती है तो उसके जन्म लेने वाले शिशु पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

शिक्षा–दीक्षा पर प्रभाव : सरकार यदि सबके लिए निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था कर दे तो भी कुपोषित व्यक्ति इस व्यवस्था का समुचित लाभ नहीं उठा पाता। शारीरिक या मानसिक अथवा दोनों ही रूपों में कमजोर होने के कारण वह पिछड़ जाता है और समाज के लिए अनुपयोगी सिद्ध होने लगता है।

सक्रियता का अभाव : सामाजिक समस्याओं से निपटने, सामाजिक प्रश्नों पर पहल करने या किसी भी प्रकार की सामाजिक गतिविधि में सक्रियता से योगदान करने में कुपोषित व्यक्ति आगे नहीं आ पाता। उसके मन में वह उत्साह ही नहीं होता जो किसी सामान्य व्यक्ति के मन में हो सकता है। वह एक तरह से समाज का निष्क्रिय अंग बन कर रह जाता है। उससे सामाजिक विकास में योगदान की आशा करना भी व्यर्थ होता है।

कुपोषण के आर्थिक परिणाम

किसी भी देश की सबल आर्थिक संरचना उसकी प्रगति की प्रतीक है। लेकिन लोगों का कुपोषण के कारण कमजोर और विकलांग होना इस प्रगति में बाधक बनने का एक महत्वपूर्ण कारक है जिसकी प्रायः उपेक्षा कर दी जाती है। जनसंख्या के अनुपात के संदर्भ में आज दुनिया के सबसे अधिक कुपोषित लोग इथियोपिया में हैं। इसी कारण आज इथियोपिया दुनिया का सबसे पिछड़ा हुआ देश है। कुपोषण के क्या आर्थिक दुष्परिणाम होते हैं, इसे निम्न बातों से समझा जा सकता है।

कुपोषण और आर्थिक विकास में संबंध

यदि लगातार और बड़ी संख्या में कुपोषित पीढ़ियां सामने आती हैं तो देश की आर्थिक संरचना चरमरा जाती है, क्योंकि उत्पादन कार्यों में योगदान के लिए स्वस्थ–समर्थ व्यक्ति नहीं मिल पाते। कुपोषण और आर्थिक विकास में यह एक प्रकार का अदृश्य संबंध है। भूलना नहीं चाहिए कि तमाम औद्योगिक और तकनीकी प्रगति के बावजूद किसी भी आर्थिक गतिविधि में मानव संसाधनों का सबसे बड़ा योगदान होता है। वे ही मशीनों पर प्रत्यक्ष और परोक्ष नियंत्रण करते और आर्थिक गतिविधियों को संचालित करते हैं। लेकिन यदि मनुष्य स्वस्थ न हों, कुपोषित, कमजोर और विकलांग हों तो वे विराट और समर्थ मानव संसाधन नहीं बन सकते। इसीलिए नोबेल पुरस्कार विजेता अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन भी शिक्षा प्रसार आदि के साथ–साथ स्वास्थ्य सेवाओं और पोषाहार प्रदान करने पर लगातार जोर देते रहे हैं।

कृषि–प्रधान अर्थव्यवस्था और पोषाहार

कृषि–प्रधान अर्थव्यवस्था में शारीरिक श्रम की भारी आवश्यकता पड़ती है। किन्तु यदि कुपोषण तथा अन्य सम्बद्ध कारणों से श्रमिक कमजोर और अस्वस्थ रहने लगें तो इसका सीधा प्रभाव कृषि–कार्यों और कृषि–उत्पादनों पर पड़ना स्वाभाविक है। भारत में जहां–जहां मशीनीकृत खेती होती है (जैसे पंजाब) वहां–वहां यह दुष्प्रभाव ज्यादा देखने को नहीं मिलता, किंतु जिन अंचलों में मशीनीकृत खेती का अभाव है, वहां इसका कृषि–गतिविधियों पर प्रभाव पड़ा है। पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार इसके उदाहरण हैं जहां उपजाऊ भूमि होते हुए भी कृषि–उत्पादन पर्याप्त नहीं है क्योंकि अधिकतर लोग गरीब, बीमार, कुपोषित और कमजोर हैं।

धन का अपव्यय

पोषाहार के प्रति लापरवाही बरतने अथवा उसके अभाव के कारण देश का बहुत–सा धन उपचार और औषधियों पर खर्च हो जाता है। यदि शुरू से ही पोषाहार पर ध्यान दिया जाए और उसके प्रति चेतना हो तो उपचार और औषधियों पर अधिक धन खर्च नहीं होगा और इस धन का उपयोग अन्य उत्पादक कार्यों पर किया जा सकेगा।

देश की सुरक्षा पर प्रभाव

किसी देश की आर्थिक प्रगति का उस देश की सुरक्षा से गहरा संबंध है। सशक्त और सबल सैनिक सीमाओं की रक्षा करते हैं। लेकिन यदि बड़ी संख्या कुपोषितों की हो तो सीमाओं की रक्षा करने की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इसका देश की रक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है।

सरकारी गैर–सरकारी प्रयास

पोषाहार के महत्व को समझते हुए सरकार ने अनेक उपाय किए हैं। समेकित बाल विकास योजना इस दिशा में सबसे बड़ा कदम है। महिला और बाल विकास विभाग, भारत सरकार के 1998–99 के प्रतिवेदन के अनुसार 4,200 विकास खंडों और प्रमुख शहरी झुग्गी, बस्तियों में इस योजना के माध्यम से छः वर्ष से कम आयु के गरीब बच्चों को पोषाहार दिया जा रहा है। इसी विभाग के अधीन खाद्य और पोषाहार बोर्ड भी कार्यरत है जो लोगों को सस्ते और उचित पोषाहार की जानकारी देता है। पोषाहार की एक अलग योजना भी है। केंन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड के माध्यम से अनेक स्वयंसेवी संगठन तथा भारतीय आदिम जाति सेवक संघ और भारतीय बाल कल्याण परिषद् देश भर में 12,000 से अधिक पालनाघर चला रहे हैं जिनमें पांच वर्ष तक के बच्चों को पोषाहार दिया जाता है। तमिलनाडु, हरियाणा, दिल्ली आदि राज्यों में सरकारी और नगर निगमों के विद्यालयों में बच्चों को दोपहर का पौष्टिक भोजन दिया जा रहा है। किंतु ये प्रयास सीमित हैं। फिर कार्यक्रमों के अंतर्गत पोषाहार के लिए खर्च की जाने वाली राशि भी बहुत कम है। यह समेकित बाल विकास योजना और पालनाघर कार्यक्रम में प्रति बच्चा प्रति दिन खर्च 1.05 रूपये है। अनेक संस्थाएं कार्यक्रम को ईमानदारी से भी नहीं चलातीं।

उपर्युक्त बातों से स्पष्ट है कि कुपोषण की समस्या का हमारी सामाजिक–आर्थिक संरचना पर व्यापक प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। यदि हम भावी सशक्त और स्वस्थ पीढ़ी चाहते हैं तो हमें इस समस्या को हल करना होगा। इसके लिए समेकित बाल विकास सेवा और पालनाघर जैसे कार्यक्रमों को जहां एक ओर बेहतर बनाने की आवश्यकता है, वहीं दूसरी ओर लोगों में सस्ते पौष्टिक आहार के प्रति चेतना लाने, उन्हें पौष्टिक आहार की महत्ता समझाने और जनसंख्या नियंत्रण के अभियान को बड़े पैमाने पर चलाने की जरूरत है। हमारी अधिकांश समस्याओं की जड़ जनसंख्या विस्फोट है जिसके फलस्वरूप देश में गरीबी बढ़ रही है और गरीबी का एक परिणाम लोगों को पौष्टिक आहार न मिल पाना और परिणामस्वरूप उनका कुपोषित हो जाना है। लेकिन कुपोषण का एक अन्य कारण सस्ते पौष्टिक आहार की जानकारी का अभाव भी है। यह जानकारी बड़े पैमाने पर अभियान चला कर लोगों को प्रदान की जानी चाहिए। ❑

कुरुक्षेत्र की विज्ञापन दरें

	सामान्य दर		चार विज्ञापनों की अनुबंध दर		विशेषांक की दरें	
	रंगीन	श्वेत/श्याम	रंगीन	श्वेत/श्याम	रंगीन	श्वेत/श्याम
पूरा पृष्ठ	8000	4000	25600	12800	12000	6000
आधा पृष्ठ	5000	2500	16000	8000	7000	4000
पिछला आवरण पृष्ठ	13000	7000	41600	22400	19000	10000
अन्दर का (तीसरा) आवरण पृष्ठ	11000	6000	35200	19200	16000	9000

पत्रिका के आकार संबंधी अन्य जानकारी

पूरा आकार	:	21 से.मी. 28 से.मी.
मुद्रित क्षेत्र	:	17 से.मी. 24 से.मी.
मुद्रण प्रणाली	:	आफसेट प्रेस
स्वीकार्य विज्ञापन सामग्री	:	केवल आर्टवर्क/आर्टपुल/पोजिटिव
विज्ञापन स्वीकार करने की अंतिम तिथि	:	60 दिन पहले
पता जिस पर विज्ञापन भेजा जाए	:	विज्ञापन एवं प्रसार प्रबंधक प्रकाशन विभाग ईस्ट ब्लाक 4, लेवल 7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली 110066 टेलीफोन : 6105590 (कार्यालय) 6116185 (निवास) फैक्स : 6175516, 6193012

डिमांड ड्राफ्ट निदेशक, प्रकाशन विभाग को नई दिल्ली में देय हो

हम विज्ञापन एजेंसियों को 15 प्रतिशत कमीशन देते हैं।

किसी पत्रिका के दो भाषाओं के संस्करणों के एक ही अंक के लिए विज्ञापन जारी करने पर 10 प्रतिशत की छूट दी जाती है।

गर्भ के भीतर और बाहर कन्याओं की हत्या

डा. प्रनोब कुमार सरकार

यह कैसी विडम्बना है कि भारत जैसे देश में जहां "यत्र नारी पूजयंते, रमंते तत्र देवता" जैसा महान आदर्श है वहां नारी का अब जन्म ही अशुभ माना जाने लगा है। नवरात्रि के दिन छोटी बच्चियों को देवी स्वरूप मानकर उनकी पूजा की जाती है। दुर्गा, काली, सरस्वती,, लक्ष्मी तथा पार्वती आदि देवियों की आराधना की जाती है। परंतु ठीक इसके विपरीत कन्या भ्रूण तथा शिशु कन्याओं की निर्ममतापूर्वक हत्याएं भी यहां की जाती हैं। हम सन् 2000 की दहलीज़ पर कदम रख चुके हैं, सेटेलाइट युग में जी रहे हैं परंतु कन्याओं के बारे में परंपरागत धारणाएं अंगद के पैरों की तरह अब भी वहीं जमी हुई हैं।

सार्क देशों ने वर्ष 1990 को *"बालिका वर्ष"* तथा 1991 से 2000 तक को *"बालिका दशक"* के रूप में घोषित किया था। भारत सरकार ने भी समूचे देश में कन्याओं का सामाजिक स्तर बढ़ाने तथा उनके खिलाफ पक्षपात रोकने के उद्देश्य से एक राष्ट्रीय कार्य योजना तैयार की थी। कार्य योजना का लक्ष्य था बालिकाओं की भ्रूण हत्या अथवा नवजात शिशु हत्या रोकना तथा कन्याओं और महिलाओं का सामाजिक स्तर उठाने के लिए बहुकोणीय प्रयास। सरकार तथा विभिन्न संगठनों के प्रयासों के बावजूद कन्या भ्रूण तथा शिशु कन्याओं की हत्या का तांडव देश में अब भी जारी है जिसका एक स्पष्ट कारण है भारतीय समाज में इस संबंध में सही चेतना का अभाव। "बेटी पराया धन" जैसी धारणा तथा दहेज जैसी समस्याएं आमतौर पर लोगों को भ्रूण हत्या तथा कन्या शिशुहत्या के लिए प्रेरित करती हैं। नारी के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण की ही परिणिति है कि भारत में जहां 1901 में 1000 पुरूषों पर 972 महिलाएं थीं वहीं इस शताब्दी के अंत में 1000 पर मात्र 927 महिलाएं हैं। अंतर्राष्ट्रीय संस्था यूनीसेफ के अनुसार भारत में मात्र चार राज्यों को छोड़कर हर राज्य से कन्या भ्रूण हत्या या नवजात शिशु हत्या के केस दर्ज हुए हैं। सिर्फ सिक्किम, नगालैंड, मेघालय और मिजोरम में ही अभी लोगों को इस बीमार मानसिकता ने नहीं जकड़ा है। ताजा आंकड़ों के हिसाब से उत्तर प्रदेश में 1000 पुरूषों पर 879 महिलाएं, हरियाणा में 865, पंजाब में 882, राजस्थान में 910 और मध्यप्रदेश में 931 महिलाएं हैं।

हर वर्ष हमारे देश में एक करोड़ 20 लाख बच्चियां जन्म लेती हैं जिनमें से 30 लाख अपना 15वां जन्म दिन नहीं मना पातीं। 1976–77 में कन्या भ्रूण के कारण होने वाले गर्भपातों की संख्या 2,78,370 थी जो एक दशक बाद वर्ष 1986–87 में 5,84,218 हो गई और आज कानूनी प्रतिबंध के बावजूद मादाभ्रूणों की हत्या की संख्या 10 लाख पहुंच गई है।

हालांकि देश में भ्रूण हत्या के खिलाफ कानून भी बनाया गया है, एम.टी.पी. एक्ट 1971, के अनुसार 20 हफ्ते के बाद गर्भपात जुर्म है। परंतु लिंग निर्धारण तो 13 हफ्ते पर ही मुमकिन हो जाता है।

महाराष्ट्र सरकार पहली बार मई 1988 में महाराष्ट्र रेगुलेशन आफ प्रीनेटल डायग्नोस्टिक एक्ट लाई। दरअसल इस कानून के पहले ही महाराष्ट्र में मादा भ्रूण हत्या पर काफी कोहराम मचा हुआ था। इस कानून के बाद अल्ट्रासाउंड आदि तरीकों से लिंग निर्धारण पर रोक लगा दी गई और जुर्म साबित होने पर तीन वर्ष की सजा मुकर्रर की गई। इसी तर्ज पर भारत सरकार ने भी "प्रीनेटल डायग्नोस्टिक टेक्नीक रेगुलेशन" तथा "प्रिवेंशन आफ मिस यूज़ एक्ट 1994" बनाया। इसमें भी तीन साल कैद और 10,000 रूपये तक जुर्माना हो सकता है। परन्तु दुख की बात यह है कि ऐसे कानून आपराधिक 'हाथियों' के कानो में जूं रेंगने के समान हैं। यूनिसेफ की रिपोर्ट के अनुसार एशिया में गर्भावस्था में बाल शिशुओं की अपेक्षा मादा शिशुओं का जीवन विश्व के मानदंडों के अनुसार बहुत ही कम है। दिल्ली स्थित प्राची एजुकेशनल सोसायटी ने भी पिछले दिनों इस संबंध में एक सर्वेक्षण कराया। सर्वेक्षण में पाया गया है कि भ्रूण हत्या और गर्भपात की सबसे अधिक शिकार मादा शिशु होती हैं। परिवार कल्याण निदेशालय द्वारा प्रसव पूर्व निदान तकनीक अधिनियम 1994 के लागू होने के बाद भी देश भर के कस्बों, शहरों और महानगरों के निजी क्लीनिकों में गर्भावस्था के प्रारंभिक दिनों में भ्रूण परीक्षण हो रहे हैं और गर्भवती स्त्रियों, उनके परिजनों और डाक्टरों की मिलीभगत से मादा भ्रूणों की हत्याएं की जा रही हैं। राष्ट्रीय महिला आयोग के सहयोग से दिल्ली की चार झुग्गी बस्तियों–जवाहर कैंप, आजाद कैंप, ज़ाफराबाद एवं टिगरी कालोनी में किए गए सर्वेक्षण से यह बात स्पष्ट हो चुकी है कि अल्ट्रासाउंड जैसी आधुनिक चिकित्सा सुविधाओं का बड़े पैमाने पर दुरूपयोग किया जा रहा है। अल्ट्रासाउंड जांच के बाद गर्भस्थ मादा भ्रूण की या तो हत्या कर दी जाती है या फिर गर्भवती स्त्रियों की देखभाल में भेदभाव बरता जाता है। इस तरह भ्रूण हत्या या गर्भपात की शिकार होने से जो मादा शिशु बच जाती हैं वे कमजोर और कम वज़न की पैदा होती हैं तथा उनके कुपोषित होने का खतरा बना रहता है। लिंग निर्धारण का काम डाक्टरों की मदद से होता है और जिस तरह चंद सिक्कों के लिए कुछ डाक्टर लिंग निर्धारण करते हैं उसी तरह कुछ स्त्री रोग विशेषज्ञ मादा भ्रूण हत्या का काम करते हैं। सौ वर्ष में यह फर्क पड़ा है कि पहले जिम्मेदारी अशिक्षित लोगों पर थी अब असली खिलाड़ी शिक्षित लोग हैं। समाज के सभी वर्ग बेशर्मी से इस पाप कार्य में शामिल हैं। बहुत कम ऐसे प्रगतिशील लोग मिलेंगे जो खुशी से एक या दो कन्याओं के

मां–बाप बनते हैं। कुछ तो पुत्र की चाहत में परिवार नियोजन को भूल ही गए हैं।

तमिलनाडु में कल्लार तथा तोड़ा जातियों में और हरियाणा की कई जातियों में नवजात कन्या की हत्या का इतिहास रहा है। गांव की एक–एक दाई ने सैकड़ों नवजात शिशुओं को तम्बाकू चटाकर या जहरीली जड़ी–बूटियों को दूध में मिलाकर मार देने के तरीके इस्तेमाल किए हैं और कई स्थानों पर तो मां–बाप ने खुद अपने बच्चों को जान से मार दिया है। पिछले दिनों राजस्थान के एक गांव में एक सौ पन्द्रह वर्ष बाद आई बारात की खबर सुनते ही लोगों के रोंगटे खड़े हो गए। परम्परागत राजपूतों के इस गांव में लड़कियों को पैदा होते ही मार दिया जाता है। आज भी उस गांव में गिनी–चुनी लड़कियां हैं। इस संबंध में प्राप्त एक रिपोर्ट के अनुसार राजस्थान के बाड़मेर और जैसलमेर, तमिलनाडु के सेलम, बिहार के सीतामढ़ी, पूर्णिया, कटिहार और भागलपुर तथा हरियाणा और पंजाब के कुछ जिलों में मादा शिशु हत्या की घटनाएं ज्यादा हो रही हैं।

सिर्फ भ्रूण और शिशु हत्याओं को कानूनन सख्ती से रोकना ही इस गंभीर समस्या का समाधान नहीं है। उचित शिक्षा, दहेज प्रथा तथा लड़की के साथ भेदभाव और अवहेलना संबंधी कुमनोवृत्तियों को जड़ से उखाड़ने में ही इस समस्या का समाधान निहित है।

कल्याण मंत्रालय ने कन्याओं के हित में केई योजनाएं चलाई हैं जिससे लोग प्रोत्साहित होकर उन्हें बोझ न समझें। केंद्रीय सरकार पहली एवं दूसरी कन्या के जन्म पर मां–बाप को 500 रूपये देगी। हरियाणा सरकार की "अपनी बेटी अपना धन" सुन्दर योजना है जिससे पहली तीन बेटियों के जन्म पर 3,000 रूपये दिए जाएंगे तथा मां की खुराक के लिए 500 रूपये अलग से दिए जाएंगे। अब तो स्कूली शिक्षा में भी कपड़े और फीस का प्रावधान हरियाणा सरकार ने रखा है। इसके अलावा कन्या के नाम से 2,500 रूपये इंदिरा विकास येाजना में निवेश किए जाएंगे, जो उसके 18वें जन्मदिन पर 25,000 रूपये होकर मिलेंगे। तमिलनाडु सरकार ने भी इसी तरह 5,000 रूपये पहली दो कन्याओं के नाम से इंदिरा विकास योजना में बीस साल के लिए निवेश करने का उपक्रम किया है। साथ ही छोड़ी गई अनाथ बच्चियों के लिए सरकारी क्रेडल (अनाथालय) बनाए गए। इन अनाथालयों से बड़ी हुई बच्चियों के लिए सरकारी नौकरियों में आरक्षण की भी व्यवस्था है। ऐसी कई योजनाएं इस समय देशभर में संचालित हो रही हैं जिससे नारी उत्थान को गति मिल रही है। परंतु यह तथ्य भी निर्विवाद है कि जन जागरण एवं जन सहयोग के बिना महज़ संस्थागत कार्यक्रमों के निष्पादन से अपेक्षित परिणाम नहीं मिल सकते हैं। जो कार्य इस सहस्राब्दि में नहीं हो पाया है वह सही जन–चेतना और कार्यक्रमों के उचित निष्पादन से अगले कुछ सदियों के भीतर हो पाना संभव अवश्य है। ❑

(पृष्ठ 2 का शेष) **पाठकों के विचार**

जानकारी इन भोले–भाले ग्रामीणों को नहीं होती। यदि इन्हें अपने अधिकारों का ज्ञान कराते हुए समयोचित जानकारी दी जाए तो देश का एक बड़ा भाग, जो कि विकास की प्रक्रिया से अभी तक अछूता रहा है, देश की प्रगति में सकारात्मक सहयोग दे सकेगा।

अंक की खास प्रस्तुतियों में *ग्राम सभाओं में दलितों की भागीदारी, ज्यादा अधिकार दें ग्राम सभाओं को, ग्राम सभाओं के संवैधानिक अधिकार* आदि अत्यधिक प्रशंसनीय हैं।

छैल बिहारी शर्मा, 'इन्द्र' छाता (उ.प्र.)

ज्ञानवर्द्धक विशेषांक

ग्राम सभा वर्ष 1999–2000 में ग्राम सभा को ज्यादा अधिकार के इस तथ्यपरक – ज्ञानवर्द्धक विशेषांक से रूबरू होने का सुअवसर प्राप्त हुआ। इसमें किंचित भी संदेह नहीं कि ग्राम सभाओं के अधिकारों में वृद्धि होनी चाहिए। इससे विकास की असमानताएं दूर होने के साथ–साथ सामाजिक सद्भाव बढ़ाने में सहायता मिलेगी। किंतु हमारे गांवों की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक व्यवस्था ऐसी है जिससे ऐसी अत्युत्तमता की आशा करना व्यर्थ है। यद्यपि कुछ ग्राम सभाओं ने इस संबंध में बहुत ही अच्छे कार्य किए हैं तदापि इनकी संख्या अल्प है। विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा शिक्षा, सिंचाई, पेयजल, स्वास्थ्य, कृषि इत्यादि दायित्व ग्राम सभाओं को हस्तांतरित किए जा रहे हैं या कर दिए गए हैं। इन मूलभूत सुविधाओं का स्तर सरकार, प्रशिक्षित मानव संसाधन, प्रौद्योगिकी और सुदृढ़ आर्थिक तंत्र के बाद भी नहीं सुधार पाई फिर संसाधनविहीन ग्राम सभाओं से आशा कैसे की जाए?

कुंदन कुमार, राधा नगर विद्युत उपकेन्द्र, फतेहपुर–212601 (उ.प्र.)

ग्रामीणों का भी दायित्व

भारत सरकार ने वर्ष 1999 को ग्राम सभा वर्ष घोषित कर सराहनीय कार्य किया है। हर व्यक्ति को चाहे निर्धन हो, महिला हो, किसी भी जाति–धर्म का हो, जुड़ने का अच्छा मौका है। इससे हम विकास की ओर अग्रसर हो सकेंगे। हमारा लक्ष्य होगा, इंदिरा आवास योजना, जवाहर ग्राम समृद्धि योजना, स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के तहत लाभार्थियों का सही चयन। वर्ष में कम से कम चार बैठकों का आयोजन कर हम अधिक से अधिक विकास की ओर अग्रसर हो सकेंगे। इस तरह ग्राम सभाओं को अधिकार दिए जाने से हम उनका सर्वोत्तम उपयोग कर सकेंगे। हमें जो अधिकार मिले, उनका हम सदुपयोग करें। सरकारी सहायता के साथ–साथ हम ग्रामीणों का भी दायित्व बनता है कि वे इसे एक नई मंजिल दें, जिससे सरकार द्वारा किए गए प्रयास सफल और साकार हो सकें।

विनोद शंकर व्यास, भागलपुर, बिहार

रासायनिक कीटनाशकों के परंपरागत जैविक विकल्प

विजय जी

रासायनिक कीटनाशकों की खोज और उपभोग का जो सिलसिला 1946 में डी.डी.टी. की खोज के बाद शुरू हुआ वह आज तक लगातार बढ़ता जा रहा है। कीड़े–मकोड़ों में प्रतिरोधक क्षमता बढ़ने के बाद एक कीटनाशक जैसे ही बेअसर साबित होने लगता है, उससे अधिक शक्तिशाली कीटनाशक की खोज होने लगती है। कीटनाशकों की इस खोज और उपभोग की होड़ में आज सारी धरती और जलस्रोत प्रदूषित हो गए हैं। मनुष्य ही नहीं अपितु धरती के सभी जीव–जन्तुओं के शरीर में कीटनाशकों की उपस्थिति लगातार बढ़ती जा रही है। कोई भी खाद्य पदार्थ यहां तक कि मां का दूध भी अब निरापद नहीं रह गया है।

रासायनिक कीटनाशकों द्वारा प्रदूषण की भयावहता को देखते हुए एक बड़ा वैज्ञानिक समुदाय अब रासायनिक कीटनाशकों के खिलाफ खड़ा हो रहा है। उर्वरक और रासायनिक कीटनाशकों के निरापद विकल्पों की खोजबीन शुरू हो गई है।

नीम हमारे यहां का एक ऐसा ही कीटनाशक और औषधीय वृक्ष है जिसके गुणों से हमारे पूर्वज हजारों साल से परिचित हैं।

आधुनिक जहरीले कीट–नाशकों की तुलना में नीम एक सर्वोत्तम कीटनाशक है। अनाज के भंडारण, दीमकों से सुरक्षा से लेकर पेड़–पौधों की हर तरह की बीमारी में इसका उपयोग आज भी किया जाता है। इस क्षेत्र में किसानों को यदि वैज्ञानिकों का सहयोग मिल जाए तो यह अकेला वृक्ष दुनिया भर के कीटनाशकों के कारखाने बंद करवा सकता है। नीम के कीटनाशक गुणों का सबसे उज्ज्वल पहलू यह है कि यह सर्वथा हानिरहित है। आधुनिक कीटनाशक जब खेतों में डाले जाते हैं तो वे शत्रु कीटों के अलावा मित्र कीटों को भी मार डालते हैं जिससे प्राकृतिक असंतुलन पैदा होता है और कीटनाशकों की मांग लगातार बढ़ती जाती है। इसके अलावा आधुनिक कीटनाशकों के दीर्घजीवी होने के कारण पृथ्वी और जलस्रोत प्रदूषित हो रहे हैं। परंतु नीम ऐसा प्राकृतिक कीटनाशक है जो अपना काम करने के बाद शीघ्र ही अपघटित हो जाता है तथा पृथ्वी की उर्वरा शक्ति बढ़ा देता है।

नीम के औषधीय और कीटनाशक गुणों को देखकर ही दुनिया के अनेक देशों में नीम के वृक्षारोपण को प्रोत्साहन दिया गया है। फिलीपींस, सूडान, कीनिया, नाइजीरिया तथा अमरीका में नीम की खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है। दुनिया की अनेक प्रयोगशालाओं में नीम पर शोध जारी हैं। हाल ही के वैज्ञानिक शोधों से यह बात सामने आई है कि नीम के रस को फसल पर छिड़कने से कीट दूर भाग जाते हैं और फसलें नहीं खाते। जैव विज्ञान को जो सक्रिय घटक नीम की पत्तियों, फलों, छाल और बीजों में मिले हैं वे माइट और सूत्र कृमि, भृंग मक्खी, पतंगे और टिड्डियों सहित करीब 125 प्रकार के कीटों को नियंत्रित करने की क्षमता रखते हैं। नीम का शुद्ध सार तत्व मच्छरों के लार्वो को मार सकता हैं। इस प्रकार यह मच्छर नियंत्रण के लिए अति उपयोगी है।

मारगोसन ओ योगिक नीम के बीजों से प्राप्त होता हैं। यह एक प्रभावकारी कीटनाशक है जो अमरीका के बाजारों में मान्यता प्राप्त कर चुका है। नीम से प्राप्त होने वाला एक और यौगिक है "अर्जदरेक्टी"। इसे सुरक्षित और उचित कीटनाशक माना गया है। इस यौगिक को कोलबिंया विश्वविद्यालय के क्यूबों तथा नाकानिशी ने 1978 में प्राप्त किया था। यह यौगिक अफ्रीका की टिड्डी "शिष्टोसंकाग्रेग्ररिया" की शत–प्रतिशत रोकथाम में सक्षम है। इसी प्रकार एक अन्य टर्पीनायड पेलिया–निट्रयाल पृथक किया गया है।

निरापद लेकिन कारगर कीटनाशक : नीम

एशियाई विकास बैंक की मदद से मनीला स्थित अन्तर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्था ने नीम की खली और नीम के तेल के कीटनाशक उपयोग की संभावनाओं का पता लगाने के लिए परियोजना बनाई है। संस्थान में पिछले सात वर्षों से चल रहे परीक्षणों में पाया गया है कि नीम के तेल और खली के उपयोग से, बीमारियों से होने

वाली फसल क्षति में 40 प्रतिशत की कमी आई है। सूडान की राजधानी खार्तूम के कृषि शोध संस्थान में प्रोफेसर अहमद सादिक ब्रिटेन की केयर नामक संस्था के सहयोग से पिछले 30 वर्षों से नीम के वृक्ष पर प्रयोग करते आ रहे हैं। नीम से निर्मित कीटनाशक सूडान में इतना लोकप्रिय हो रहा है कि अब सरकार ने भी इसे प्रोत्साहन देना शुरू कर दिया है।

चूल्हे से निकली कंडे की आग को साग–सब्जियों पर छिड़ककर कीड़े–मकोड़े की रोकथाम का तरीका बहुत पुराना है। ऐसी साग–सब्जियां स्वास्थ्य के लिए एकदम निरापद होती हैं। राख से पौधों को पोषक–पदार्थ भी मिलते हैं। इसी प्रकार मक्के की गिल्ली (मक्के की फली से बीज निकालने के बाद बचा हिस्सा) का यदि सही तरीके से इस्तेमाल किया जाए तो यह एक उत्तम प्राकृतिक कीटनाशक का काम कर सकता है। वैज्ञानिक शोधों से पता चला है कि गिल्ली की राख में उत्तम किस्म का कीटनाशक फंफूद–नाशक एवं जीवाणु–नाशक गुण होता है। इनका लाभ उठाकर भविष्य में सस्ती तथा प्रदूषण रहित जीवाणु नाशक दवाएं बनाई जा सकती हैं। मक्का उत्पादक प्रदेशों में कुटीर उद्योगों की अनेक परियोजनाएं चलाई जा सकती हैं जिससे किसान लाभान्वित हो सकते हैं।

गिल्ली की राख का उपयोग किसान अपने घरेलू तथा खेती के कामों में कर सकते हैं। दस ग्राम गिल्ली की राख को डेढ़ लीटर पानी में घोलकर उबालने तथा छानने के बाद पानी का छिड़काव करने से मूली, गोभी, बैंगन, सेम, भिंडी, लाही इत्यादि सब्जियों में लगने वाले माहू या अन्य कीड़े मारे जा सकते हैं। इस पानी से पौधों की जड़ों को काटने वाले कीड़े भी मारे जा सकते हैं। खटमल, दीमक, चींटी, मच्छर तथा मक्खियों को मारने के लिए लगभग 20 ग्राम राख को एक लीटर पानी में उबालना चाहिए। इस पानी के इस्तेमाल से जानवरों की जूं तथा लीखें भी मारी जा सकती हैं। घरों में पाए जाने वाले तिलचट्टे भी राख के पानी से मर जाते हैं। गेहूं जौ, चना, मटर को रखने पर उनमें प्रायः घुन या पाई लग जाती हैं। एक क्विंटल अनाज में लगभग 300 ग्राम गिल्ली की राख मिलाकर रखने से उसमें घुन नहीं लगते। बोने के उपयोग में लाने वाले बीजों का राख के पानी से शोधन करने से अंकुरित बीजों पर लगने वाले कीट नष्ट हो जाते हैं जिससे अंकुरण का प्रतिशत बढ़ जाता है।

गिल्ली की राख तथा इसके पानी का इस्तेमाल पौधों में अनेक प्रकार की फफूंद और जीवाणु रोगों की रोकथाम के लिए भी किया जा सकता है। राख के पानी से टमाटर की फसलों को झुलसा रोग से बचाया जा सकता है। आलू तथा अन्य सब्जियों पर राख के सीधे या पानी के छिड़काव से वाइरस जनित रोगों को कम किया जा सकता है। नीबू तथा नारंगी जैसे फलों की पत्तियां काली पड़ने की स्थिति में गिल्ली के राख का इस्तेमाल किया जा सकता है। कालापन समाप्त होने के साथ–साथ फल लगने में मदद मिलती है। गिल्ली की राख में कोई रासायनिक विष नहीं होता। अतः कीटों को मारने के लिए सब्जियों पर इसका छिड़काव स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक नहीं है। साथ ही साथ इसका उपयोग अन्य दवाओं से सस्ता तथा संतोषजनक और प्रभावकारी है। प्रदूषण का भी खतरा नहीं है।

गिल्ली की राख का दूसरा घरेलू एवं अत्यन्त लाभकारी उपयोग साबुन के रूप में है। पानी में उबली हुई राख का छना पानी साबुन के पानी की तरह कपड़े साफ कर सकता है। हां, इसमें झाग नहीं आएगा परंतु मैल बिल्कुल छट जाएगी। बर्तन धोने में राख किसी भी प्रकार से "विम" से कम उपयोगी नहीं है। इसके उपयोग से बर्तनों का क्षरण नहीं होता।

खेती–बाड़ी में लगने वाले कीड़ों–मकोड़ों को नष्ट करने के लिए उनके प्राकृतिक शत्रु हुआ करते हैं। ये प्राकृतिक शत्रु कुछ विशेष किस्म के कीड़े–मकोड़े, पक्षी, मेंढक और सांप आदि हो सकते हैं। खेतों में फसल तैयार होने के आस–पास के दिनों में उन पर चूहों का प्रकोप बढ़ जाता है। देखा गया है कि उन्हीं दिनों चूहों को पकड़ने वाले पक्षियों की आवाजाही भी खेतों में बढ़ जाती है। उल्लू रात में चूहे पकड़ने में माहिर होते हैं। इसीलिए अनेक किसान चूहे के बिलों के पास खेत में लट्ठे गाड़ देते हैं ताकि उल्लू आकर उन पर बैठें तथा चूहों का सफाया करें। तरह–तरह के पक्षी दिन भर खेतों में कीड़े–मकोड़ों की खोज में ही विचरण करते रहते हैं। देखा गया है कि जिन दिनों चने या धान में जोरई कीट का हमला होता है प्रायः उन दिनों पता नहीं कहां से क्षेत्र के बगुले या अन्य पक्षी खेत तक पहुंच जाते हैं और कीड़ों का सफाया शुरू कर देते हैं।

करीब डेढ़ दशक पहले चन्द्रशेखर लोहुमी नामक स्कूल टीचर ने उत्तराखण्ड के अनेक क्षेत्रों में फैली झाड़ी कुरी को नष्ट करने की एक जैविकी विधि खोजकर बड़े–बड़े वैज्ञानिकों को भी हैरत में डाल दिया था। श्री लोहुमी ने लेंटाना बग नामक एक ऐसे कीड़े की खोज की जो कुरी की झाड़ी को चूसकर सुखा देता है। उक्त गंवई आदमी ने बिना प्रयोगशाला और बिना विज्ञान की शिक्षा के उक्त कीड़ों के संवर्धन और उपयोग की सम्पूर्ण प्रक्रिया की खोज की। बाद में श्री लोहुमी को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का सर्वोच्च रफी अहमद किदवई पुरस्कार देकर सम्मानित किया गया।

अनेक कीड़े–मकोड़े तथा उनके अंडे–लार्वा आदि को तो मनुष्य स्वयं बिना कीटनाशकों का सहारा लिए नष्ट कर सकता है। कुछ वर्षों पूर्व ऐसा ही सफल प्रयोग पश्चिमी उत्तर प्रदेश की गन्ना मिलों और गन्ना किसानों ने शुरू किया। गन्ना मिलों ने उन पत्तियों को लाने वाले किसानों को पुरस्कार देना शुरू किया जिन पत्तियों पर गन्ने के कीड़े पाइरिला और अगोला बोरर के अंडे हों। इस प्रयोग में किसानों और अन्य बेरोजगार लोगों ने बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया। इससे गन्ने को खतरनाक कीड़ों से बचाया जा सका। कीटनाशकों के प्रदूषण से मुक्ति मिली और साथ–साथ जेब खर्च के लिए पैसा भी मिला।

कीटनाशकों के प्रदूषण की भयावहता से पश्चिमी देश काफी पहले से परिचित हो चुके हैं। अपने देश में भी इसके भयावह परिणाम सामने आने लगे हैं। देश के जिन प्रांतों में हरित क्रांति का ज्यादा असर रहा है वहीं पर कीटनाशकों का अधिक प्रयोग भी हुआ है। इन्हीं प्रांतों में कीटनाशकों का दुष्प्रभाव भी अधिक रहा है। भारत में इस समय प्रतिवर्ष लगभग 1,000 मीट्रिक टन रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग

(शेष पृष्ठ 44 पर)

भारत पधारें

डा. राधे मोहन प्रसाद

भारतीय स्वतंत्रता की 50वीं वर्षगांठ को ध्यान में रखते हुए वर्ष 1999–2000 को 'भारत पधारें' वर्ष घोषित किया गया है। अन्तर्राष्ट्रीय सीमाओं वाले इस संचार युग ने पर्यटन क्षेत्र के लिए विराट संभावनाएं उपलब्ध कराई हैं। एक अनुमान के अनुसार लगभग 60 करोड़ से अधिक पर्यटक प्रति वर्ष एक देश से दूसरे देश की यात्रा के लिए निकलते हैं। प्राकृतिक सौंदर्य हमेशा से ही पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र रहा है। हाल में ही विश्व संगठन द्वारा प्रकाशित एक रिपोर्ट 'द टूरिज्म विजन 2020' के अनुसार आने वाले वर्षों में पर्यटन क्षेत्र में लगभग पांच प्रतिशत की दर से वार्षिक वृद्धि होने की संभावना है। विश्व पर्यटकों की संख्या जो 1996 में छः करोड़ थी क्रमशः बढ़कर वर्ष 2020 में छः अरब हो जाएगी। इस विश्व भ्रमण से होने वाली आय अनुमानतः 20 अरब डालर होगी। पर खेद की बात है कि विश्व पर्यटन कारोबार में भारत का हिस्सा केवल 0.4 प्रतिशत है। अंतर्राष्ट्रीय पर्यटकों को आकर्षित करने वाले देशों की सूची में भारत 46वें स्थान पर है जिसका एक मुख्य कारण बुनियादी सुविधाओं का अभाव रहा है।

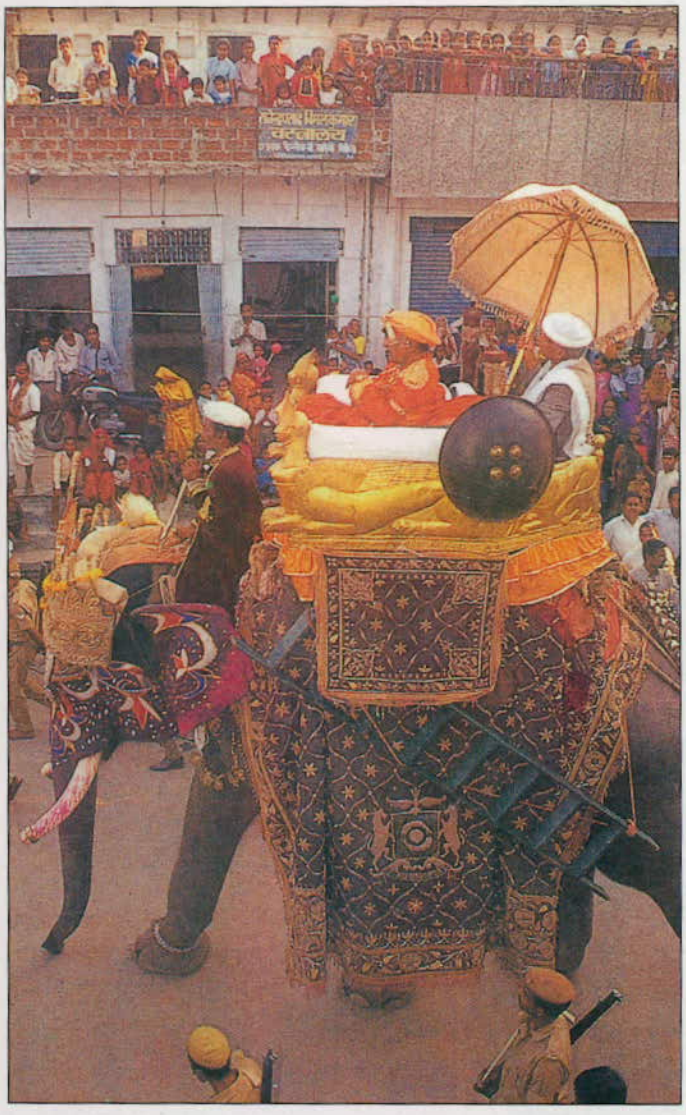

पर्यटन की विराट संभावनाओं से भरा देश: भारत

पर्यटन से तात्पर्य किसी व्यक्ति द्वारा अपने घर से किसी दूसरी जगह पर जाकर मनोरंजन, आनंद, छुट्टियां बिताने, धार्मिक और सामाजिक उत्सवों में भाग लेने के उद्देश्य से की जाने वाली यात्राएं और अस्थायी रूप से एक दिन से ज्यादा रुककर दर्शनीय स्थलों का अवलोकन करना है। पर्यटन का मुख्य उद्देश्य नए वातावरण का सृजन, नए–नए स्थलों का दर्शन और सुखद अनुभवों का उपयोग करना है। एक ओर जहां 'अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटन' शांति के लिए एक दूत साबित होता है, वहीं दूसरी ओर 'घरेलू पर्यटन' राष्ट्रीय एकता को मजबूत बनाता है। आज जबकि विश्व के अधिकांश देश परमाणु शस्त्रों की होड़ में लगे हुए हैं, ऐसे में पर्यटन निश्चित रूप से विश्व शांति स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। पर्यटन को आज विश्व के विभिन्न देशों में तीसरा सबसे बड़ा निर्यात उद्योग का दर्जा मिला है और भारत में भी वस्त्र उद्योग और हीरे जवाहारात उद्योग के बाद पर्यटन को तीसरा सबसे बड़ा विदेशी मुद्रा कमाने वाला उद्योग माना जाता है जो अगले पृष्ठ पर दी गई तालिका–1 से स्पष्ट है:

पर्यटन संभवतः अकेला प्रदूषणमुक्त उद्योग है। पर्यटन उद्योग का महत्त्व इसलिए भी अधिक हो जाता है कि इसे सामाजिक स्थिरता, सामुदायिक कार्यक्षमता बढ़ाने और व्यक्ति के हितों की रक्षा करने वाला माना जाता है। जहां विदेशी मुद्रा की प्राप्ति से देश की आर्थिक स्थिति मजबूत होती है वहीं इससे राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय तनाव दूर करने में सहायता मिलती है। लोगों का जीवन–स्तर ऊंचा उठाने में पर्यटन उद्योग की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। ऐसे पिछड़े क्षेत्रों का विकास इसके माध्यम से हुआ, जो उपेक्षित पड़े थे। भारत में जहां अनेक ऐतिहासिक पुरातत्व की इमारतें और स्मारक हैं वहीं दूर–दूर तक फैला हुआ वृक्षों से आच्छादित समुद्र तट, बड़ी–बड़ी नदियां, धार्मिक तीर्थ स्थल, विभिन्न तरह की जलवायु, वन्य जंतुओं की विभिन्न प्रजातियां, सांस्कृतिक धरोहर की विविधता का सम्पूर्ण विश्व में कोई विकल्प ही नहीं।

भारत में पर्यटन की विकास यात्रा 1948 से ही हुई। 1967 में पर्यटन एवं नागरिक उड्डयन मंत्रालय की स्थापना हुई। 1989 में पर्यटन वित्त निगम की स्थापना हुई तथा मई 1998 से पर्यटन विभाग को एक स्वतंत्र मंत्रालय बना दिया गया। विश्व की लगभग 11 प्रतिशत जनसंख्या

तालिका : 1

वर्ष	पर्यटकों से आय (करोड़ में)
1980	920
1985	1,300
1990	2,386
1995	7,366
1996	10,050
1997	11,051
1998	11,748

इस क्षेत्र से जुड़ी है तथा 21 करोड़ लोगों को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से इससे रोजगार मिला हुआ है। भारत में भी इस समय प्रत्यक्ष रूप से पर्यटन उद्योग में रोजगार पाने वालों की संख्या दो करोड़ से ऊपर है। भारतीय पर्यटन उद्योग की एक मुख्य विशेषता यह है कि होटल, उड़ान सेवा, ट्रैवल एजेन्सी, हथकरघा तथा सांस्कृतिक गतिविधियों के सहारे सबसे अधिक रोजगार महिलाओं को मिला है। वास्तव में इस उद्योग में महिलाओं की संख्या पुरुषों से दोगुनी है। भारत में आठवीं योजना के अंतर्गत पर्यटकों के आगमन से एक प्रतिशत से 10 प्रतिशत तक की वार्षिक वृद्धि का अनुमान लगाया गया था जो कि विभिन्न कारणों से पूरा न हो सका। नौवीं योजना के अंतर्गत 511 करोड़ रुपये के व्यय से पर्यटन विकास को विशेष महत्व दिया गया है। वर्ष 2001 तक पर्यटक आगमन में आठ प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य तय करते हुए 33.7 लाख पर्यटकों के आगमन तथा वर्ष 2002 तक 36.4 लाख लोगों के आने का अनुमान लगाया गया है। तालिका–2 भारत में आने वाले पर्यटकों की संख्या को दर्शाती है:

नौवीं योजना में पर्यटन विकास के लिए चुने हुए पर्यटन केंद्रों तथा परिपथों के विकास पर विशेष ध्यान देने की नीति अपनाई गई है। इसके लिए सार्वजनिक तथा निजी दोनों ही क्षेत्रों का समन्वय और सहयोग लिया जाएगा। 1998 तक पर्यटन मंत्रालय द्वारा अनुमोदित सूची

तालिका : 2

वर्ष	पर्यटकों की संख्या (लाखों में)
1990–91	17.00
1991–92	16.80
1992–93	18.20
1993–94	18.70
1994–95	19.11
1995–96	21.80
1996–97	23.00
1997–98	23.74
1998–99	23.61
2000	30.00 (अनुमानित)

में 1,988 होटल तथा 65,598 कमरे थे। वर्तमान में देश में होटल प्रबन्धन के 20 संस्थान तथा पाक कला के 14 संस्थान काम कर रहे हैं। पर्यटन मंत्रालय के क्षेत्रीय कार्यालय के माध्यम से भारतीय पर्यटन का प्रचार तथा विपणन किया जा रहा है। 'देश के प्रमुख पर्यटन स्थलों के जीर्णोद्धार के लिए एक बड़ी योजना के अंतर्गत हर वर्ष दो–दो करोड़ रुपये खर्च कर 50 शहरों को पर्यटन केंद्र के रूप में विकसित किया जाएगा जिसकी आधी राशि केंद्र तथा आधी राज्य सरकार द्वारा वहन की जाएगी। देशाटन तथा पर्यटन के महत्व को देखते हुए विश्वविद्यालयों में पर्यटन को एक विषय के रूप में स्थान दिया गया है। पर्यटन मंत्रालय ने भी इनके विकास हेतु अनेक उपाए किए हैं जैसे कि, राज्य सरकारों को सहायता, विदेशी मीडिया को प्रोत्साहन, समय–समय पर विशेष भारतीय पर्यटन का आयोजन जैसे कि, भारत भ्रमण वर्ष, खजुराहो महोत्सव, बौद्ध महोत्सव, हस्तशिल्प मेला आदि का आयोजन। भारतीय रेल द्वारा भी पर्यटन स्थलों के लिए पैकेज यात्राएं शुरू की गई हैं। तालिका–3 विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत व्यय की राशि को प्रदर्शित करती है:

वर्ष 2001 तक 33 लाख विदेशी तथा नौ करोड़ देशी पर्यटकों के लिए आरामदायक सुविधाओं का प्रबंध करना सरकार के लिए निश्चय ही एक चुनौती है। इसके लिए हममें से प्रत्येक व्यक्ति को यह ध्यान रखना होगा

तालिका : 3

पंचवर्षीय योजनाएं	व्यय (करोड़ रुपये में)
दूसरी योजना	3.36
तीसरी योजना	8.00
चौथी योजना	36.00
पांचवीं योजना	73.00
छठी योजना	187.00
सातवीं योजना	326.00
आठवीं योजना	450.00
नौवीं योजना	5,700.00

कि पर्यटक हमारे राष्ट्रीय अतिथि हैं, उनकी सुख–सुविधाओं तथा भावनाओं का हर संभव ख्याल रखा जाना चाहिए। देश के भीतर स्वदेशी पर्यटन को भी विशेष बढ़ावा देने की जरूरत है क्योंकि 1,410 लाख घरेलू पर्यटक प्रतिवर्ष देश के विभिन्न मार्गों की यात्रा करते हैं और देश की सांस्कृतिक तथा भावनात्मक एकता बनाए रखने के लिए भी यह जरूरी है। देश–विदेश में ज्यादा तथा व्यापक प्रचार–प्रसार के द्वारा पर्यटन को और भी ज्यादा आकर्षक बनाया जा सकता है। पर्यटन स्थलों पर आवश्यक सुविधाएं जैसे–बैंकिंग, आवास, यातायात, दूरसंचार, मनोरंजन, पक्षी विहार केंद्र तथा राष्ट्रीय पार्कों आदि का योजनाबद्ध तरीके से विकास होना चाहिए।

कुल मिलाकर पर्यटकों का पर्यटन केंद्रों पर ऐसा शानदार स्वागत किया जाना चाहिए कि एक बार जो पर्यटक भारत आए वह मन में भारत

(शेष पृष्ठ 44 पर)

तीव्र कीटाणुनाशी लौंग

प्रतिमान

आयुर्वेद शास्त्र में 'लवंग' के नाम से पहचान रखने वाली लौंग का उपयोग आदिकाल से ही एक परंपरागत औषधि के रूप में किया जाता रहा है। लौंग की सूखी फली की कोशिकाओं में उपस्थित तीव्र गंधयुक्त तेल ही इस औषधि का सार तत्व है, जो सैकड़ों वर्षों से कृमिनाशक के रूप में उपयोग किया जा रहा है तथा शरीर की स्थानिक पीड़ा को कम करने वाली औषधि के रूप में तो लौंग का तेल आज तक आधुनिक दंत चिकित्सा का आधार बना हुआ है। विशेष रूप से दांतों के दर्द को कम करने, मसूढ़ों की सूजन तथा मुख के भीतर किसी प्रकार के गंभीर घाव की परिपूर्ति में लौंग का तेल एक प्रभावी औषधि के रूप में काम करता है।

लौंग के तेल में कई प्रकार के ऐसे मौलिक यौगिक तथा एल्केलायड घुले रहते हैं जो एक विशेष प्रकार का तीखा स्वाद तथा अत्यंत तीव्र गंध प्रदान करते हैं। अपनी तीव्र संवेदनाकारक गंध के कारण लौंग के तेल को अल्पकालिक शरीर शून्यता उत्पन्न करने में बहुत सहायक पाया गया है जिसे साधारण भांषा में सुन्न करना कहते हैं। अपने इस विशेष गुण के कारण लौंग का चिकित्सीय उपयोग बहुतायत से होता रहा है। अब तक रसायन विज्ञान के क्षेत्र में हजारों प्रयोगों के बाद भी लौंग के तेल का कोई विकल्प नहीं ढूंढ़ा जा सका है। लौंग के तेल का प्रयोग करने से एक तो रोगी को तुरंत आराम मिलता है साथ ही यह पूर्णतः विषाक्तता मुक्त भी है। साथ ही आहारनाल में थोड़ा बहुत लौंग का तेल चला जाने पर किसी प्रकार की स्वास्थ्य हानि की संभावना नहीं रहती है जबकि अन्य सुन्न करने वाली दवाएं गंभीर रूप से विषाक्त होती हैं। इसके साथ ही लौंग के तेल में कीटाणुनाशक गुण भी बड़ी मात्रा में उपलब्ध होते हैं। इसके नियमित सेवन से पायरिया की शिकायत भी दूर हो जाती है तथा दांतों की सड़न रुकती है।

आयुर्वेद शास्त्र में लौंग को बहुत महत्व दिया जाता है। लौंग के तेल में पाया जाने वाला कीटाणुनाशक तत्व इसे बहुत उपयोगी औषधीय गुणों से युक्त करता है। मुंह में बदबू आने पर, गले, श्वासनाल अथवा मुख के किसी भाग में सड़न पैदा होने पर एक लौंग को दांतों के बीच दबा कर रखने पर सड़न धीरे–धीरे खत्म होने लगती है, रक्त स्राव बंद होता है, मुख में दुर्गंध उत्पन्न करने वाले कीटाणु नष्ट होते हैं, मुख की स्वाद कलिकाएं जागृत होती हैं, रक्त संचार तीव्र होता है तथा सांस में आने वाली दुर्गंध नष्ट हो जाती है। वैज्ञानिक प्रयोगों में यह सिद्ध हुआ है कि इस प्रयोग को लगातार करते रहने पर प्राथमिक अवस्था में क्षय रोग के कीटाणु तथा श्वास संबंधी सभी रोग जड़ से नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त लौंग का नियमित सेवन मसूढ़ों को स्वस्थ और मजबूत रखता है। शीत संबंधी रोगों के निवारण के लिए लौंग बहुत

अद्भुत कीटाणुनाशक लौंग

ही उपयोगी औषधि है। लौंग के चूर्ण को तुलसी की पत्ती तथा काली मिर्च के साथ काढ़ा बनाकर पीने पर शरीर में गर्मी आती है तथा शीतजन्य दुर्बलता का पूर्ण निवारण हो जाता है। इसके साथ ही लौंग, काली मिर्च, बड़ी इलायची, तुलसी की पत्ती, तुलसी के बीज, जायफल के चूर्ण को पानी में उबालकर काढ़ा बनाया जाता है। इस काढ़े को गर्म दूध में थोड़ी–सी चीनी मिलाकर पीने से शरीर को अद्भुत स्फूर्ति प्राप्त होती है। लौंग का उपयोग साधारण मसाले के रूप में भी किया जाता है। मसाले के रूप में लौंग का उपयोग भारत में हजारों वर्षों से हो रहा है। अपनी विशिष्ट सुगंध तथा स्वाद के कारण लौंग भोजन का स्वाद बढ़ाती है। साथ ही लौंग के उपयोग से भोजन में रोगाणु आदि उत्पन्न होने की संभावना भी कम हो जाती है।

भारत में लौंग बहुत बड़े पैमाने पर उत्पन्न होती है। भारत के अधिकांश ठंडे स्थानों पर लौंग बहुतायत में उगती है। बाजार में बिकने वाली लौंग दरअसल लौंग के पेड़ की सूखी कली होती है। लौंग की ताजी कली में सूखी लौंग से भी अधिक तीव्र सुगंध तथा स्वाद पाया जाता है पर इसका भंडारण करना संभव नहीं होता है इसलिए लौंग की ताजी कली को डंठल समेत तोड़कर सुखा लेते हैं। हर वर्ष हजारों डालरों की लौंग हमारे देश से निर्यात की जाती है। भारतीय लौंग के प्रमुख खरीददारों में चीन, अमरीका, फ्रांस, इंग्लैड तथा यूरोपीय देश हैं। इसके अतिरिक्त एशिया के अधिकांश देश भी भारतीय लौंग के व्यापक औषधीय गुणों तथा इनके अनोखे स्वाद के कारण बड़े पैमाने पर इसे खरीदते हैं। ❑

40 वर्ष पहले

मनुष्य और धरती

के.एस.वी. रामन

मनुष्य द्वारा धरती के उपयोग और दुरुपयोग की कहानी प्रागैतिहासिक काल में ही शुरू हो गई थी। एक समय अन्य मांस भक्षी पशुओं की तरह मनुष्य भी जंगल में जानवरों का शिकार करता था। उस समय प्रकृति का सन्तुलन बना हुआ था। अणु–जीव, पशुओं के मल–मूत्र पौधों के लिए खाद का काम करते थे। पौधे शाकाहारियों को भोजन प्रदान करते थे तथा आदिम इंसान समेत मांसाहारी इन शाकाहारियों को अपना भोजन बनाते थे। इनमें से किसी एक पर भी कोई विपत्ति आने से अगले समूह को भोजन नहीं मिलता था और या तो उसे भूखों मर जाना पड़ता था या स्थान छोड़ कर पलायन करना पड़ता था। इस तरह प्रकृति में सन्तुलन बना रहता था।

शुरू के इंसान ने जब औजारों को खोज निकाला तथा भोजन पकाने के लिए आग ढूंढ़ ली और दूसरों से सम्पर्क स्थापित करने के लिए उसे जबान मिल गई, तो वह अन्य जीवों की अपेक्षा बहुत लाभ की स्थिति में हो गया। अन्य जीवों की अपेक्षा उसकी स्थिति अधिक सुरक्षापूर्ण हो गई और भोजन, आश्रय स्थल तथा सुरक्षा खोजने की उसकी क्षमता बढ़ गई। एक बड़ी क्रांति तब हुई जब वह जंगली पशुओं को अपने उपयोग के लिए पालने लगा। कुत्ता, जंगली गधा, ऊंट और मवेशी उसके नियन्त्रण में आ गए। इनसे उसे दूसरे पशुओं का पीछा करने में सुविधा हो गई और यह भय भी नहीं रहा कि भोजन नहीं मिलेगा। असल में डिब्बाबन्द भोजन के विचार की शुरुआत यहीं से होती है। उसने चरवाहे और रखवाले आदि रखने शुरू कर दिए जो मवेशियों को लुटेरों या मांसाहारी पशुओं से बचाते थे। घिरे हुए निर्धारित क्षेत्रों में रहते हुए ये मवेशी उससे ज्यादा घास खा जाते थे जितनी वहां की जमीन में पैदा होती। इस तरह वहां वनस्पति का नाश होने लगा। वहां वर्षा की बूंदों से मिट्टी की एक कड़ी परत जम जाती थी जिस कारण पौधों की जड़ों तक नमी न पहुंच सकती थी। सतह पर जो पानी पड़ता था, वह अपने साथ उपजाऊ मिट्टी को बहा ले जाता था। इस तरह मनुष्य के बनाए रेगिस्तानों की शुरुआत हुई। रेगिस्तान बनने पर मवेशियों का मालिक नई चरागाहों में पहुंच जाता था।

** कुरुक्षेत्र जनवरी 1960 से उद्धृत*

भूमि का सहारा

अगली क्रांतिकारी अवस्था वह आई जब मनुष्य ने खेती करना शुरू किया। उसने देखा कि वह बीज इकट्ठे कर सकता है, उन्हें उगा सकता है और अपने खाने के लिए फसल पैदा कर सकता है। अब यह पता चल गया है कि राई, (एक किस्म का अनाज) जौ और गेहूं, चावल और गन्ना, मटर और आलू तथा मूंगफली जैसी फसलों के असली घर दुनिया के विभिन्न भागों में कहां–कहां थे। उन्हीं स्थानों में शुरू में मनुष्य बसे थे। खेती से आदमी का जीवन ही बदल गया। उसे भूमि का सहारा मिल गया। चार हजार वर्ष पहले ही नमी के महत्व का पता चल गया था और पानी के विविध उपयोग किए जाने लगे थे। बड़े–बड़े समूहों में लोग नदी किनारे खेती के सहारे रहने लगे थे। मनुष्य जाति के इतिहास में शहर काफी पहले ही बनने लगे थे। जहां कहीं मनुष्य बसे, वहां उन्होंने जंगल साफ कर फसलें उगानी शुरू कर दीं। मनुष्यों और उनके मवेशियों ने आसपास के जंगलों को बुरी तरह नष्ट कर दिया और वहां भी रेगिस्तान बन गए जिन्होंने कालान्तर में नगरों को अपने में हजम कर लिया। कुछ लोगों का कहना है कि शहरों के लिए ईंटें बनाने के कारण जंगलों का बड़े पैमाने पर नाश हुआ जिनके कारण बाढ़ें आईं और नगर उनमें डूब गए। मोहनजोदड़ो के पतन का यही कारण बताया जाता है। मनुष्य द्वारा बनाया गया राजस्थान का रेगिस्तान आज भी बढ़ता जा रहा है और उपजाऊ भूमि को खा रहा है। इसका कारण भी जंगलों को जरूरत से ज्यादा चरा जाना बताया जाता है। हाल की खोजों से पता चला है कि सहारा (अफ्रीका) के नखलिस्तानों में भी ईसा से पांच–छः हजार वर्ष पहले भी मनुष्यों के अस्तित्व के चिन्ह पाए गए हैं। अब तक समझा जाता था कि यह रेगिस्तान प्रकृतिजन्य ही है, मनुष्य द्वारा बनाया गया नहीं।

'डस्ट बाउल'

औद्योगिक क्रान्ति के साथ मशीन का पर्दापण हुआ। प्रकृति के विरुद्ध लड़ी जाने वाली लड़ाई में वनों की कटाई और उन्हें नष्ट करने पर विशेष जोर दिया जाने लगा। लोग पहले से बढ़िया घरों में रहने लगे और इमारती लकड़ी, कागज तथा दूसरे उद्योगों में कच्चे माल के रूप में काम आने लगी। इमारती लकड़ी और घास की प्रति व्यक्ति खपत बढ़ गई और वन तेजी से नष्ट होने लगे। संयुक्त राज्य अमरीका के मध्य–पश्चिम क्षेत्र को आजकल 'डस्ट बाउल' (अन्धड़ वाला रेगिस्तान) कहा जाता है। पर एक समय यहां भी वनस्पति का अस्तित्व था।

पेड़–पौधों आदि की मांग बढ़ने के कई पहलू हैं। अन्य जीवों से प्रतियोगिता न होने के कारण अधिक उपभोग तथा बेहतर स्वास्थ्य के कारण जनसंख्या काफी तेज़ी से बढ़ी है। प्रकृति के नियमानुसार तो जन्मसंख्या और मृत्यु संख्या दोनों ही काफी ऊंची होती हैं। इस कारण जनसंख्या में असली वृद्धि बहुत ही मामूली हो पाती है। अधिक सुरक्षा रखने पर मृत्यु संख्या घट जाती है। किन्तु केवल अत्यधिक भौतिक एवं मानसिक विकास होने पर ही जन्म संख्या को स्वेच्छया नियन्त्रण में रखा जाता है। आजकल जिस रफ्तार से जनसंख्या बढ़ रही है, उसे देखते हुए तो कहा जा सकता है कि हर 50 साल में कुल मिलाकर दुनिया

अभिकरण के कार्य

जिला ग्रामीण विकास अभिकरण द्वारा अनेक कार्य किए जाते हैं जो निम्नांकित है:

1. मुख्य कार्य

- जिला स्तर तथा खण्ड स्तर की संस्थाओं को ग्रामीण कार्यक्रमों के आधारभूत मापदण्डों की सूचना देना तथा इसके द्वारा कराए जाने वाले कार्यों के बारे में जानकारी प्रदान करना।
- खण्डस्तर की भावी योजनाएं तथा वार्षिक योजना तैयार करवा कर जिला स्तर की योजना तैयार करना। विभिन्न सर्वेक्षणों में समन्वय स्थापित करना।
- कार्यक्रम को प्रभावी ढंग से लागू करने हेतु मूल्यांकन तथा पर्यवेक्षण करना।
- जनता को विभिन्न कार्यक्रमों की उपलब्धियों की जानकारी प्रदान करके उनके बारे में जागरूकता पैदा करना।
- राज्य सरकार को समय–समय पर विभिन्न विवरण–पत्र प्रस्तुत करना।

2. अन्य कार्य

- जिला ग्रामीण विकास अभिकरण द्वारा निम्न कार्य भी किए जाते हैं:
- विभिन्न ग्रामीण विकास कार्यक्रमों से लाभान्वित होने वाली इकाइयों का चयन करना।
- चयन किए गए परिवारों की योजनाओं के चयन की देख रेख करना।
- विभिन्न कार्यक्रमों पर किए जाने वाले निवेश की निगरानी रखना।
- विभिन्न कार्यक्रमों की वार्षिक योजनाएं तैयार करना।
- वार्षिक कार्य योजना के कार्यान्वयन की निगरानी रखना।
- बैंकों के साथ समन्वय रखना।
- विभिन्न कार्यक्रमों के कार्यान्वयन हेतु मार्ग दर्शिकाओं का प्रसार करना।
- विभिन्न कार्यक्रमों के प्रभावी निगरानी तथा मूल्यांकन की व्यवस्था करना।

सुझाव और निष्कर्ष

जिला ग्रामीण विकास अभिकरण की कार्य प्रणाली को प्रभावी बनाने हेतु निम्नांकित सुझाव दिए जा सकते हैं :

1. लाभान्वित होने वाले परिवारों का चयन सही आधार पर किया जाए जिससे कि निर्धनता उन्मूलन और रोजगार के सृजन के लक्ष्यों की पूर्ति की जा सके।
2. वित्तीय लक्ष्यों के साथ भौतिक लक्ष्यों की जानकारी ग्रामीण विकास विभाग के साथ स्थानीय जनता को भी दी जाए।
3. प्रत्येक स्तर पर प्रशासन की जवाबदेही तथा पारदर्शिता सुनिश्चित की जाए।
4. ऋण तथा अनुदान के आवंटन, वितरण तथा उपयोग पर निरन्तर निगरानी रखी जाए जिससे कि संसाधनों के दुरुपयोग को रोका जा सके।
5. अनुदान को इसके उपयोग से जोड़ा जाए तथा यह तभी वापिस नहीं लिया जाए जब इसका सदुपयोग किया जाए जिससे कि अनुदान की वापिस अदायगी न करने की शर्त से दुरुपयोग को रोका जा सके।
6. विभिन्न विभागों तथा संस्थाओं के बीच प्रभावी समन्वय स्थापित करके विभिन्न कार्यक्रमों को तैयार करने, क्रियान्वयन करने तथा मूल्यांकन करने का कार्य करवाया जाए।
7. गैर–सरकारी संस्थाओं तथा जनता की सहभागिता में वृद्धि की जाए। विश्वविद्यालय तथा अन्य अनुसंधान संस्थाओं को इन कार्यक्रमों के मूल्यांकन की जिम्मेदारी सौंपी जाए।

अतः जिला ग्राामीण विकास अभिकरण को प्रभावी ढंग से अपनी योजनाएं तैयार करने, उनका पर्यवेक्षण करने, उनका क्रियान्वयन करने तथा उनका मूल्यांकन करने हेतु एक ऐसा तंत्र तैयार करना चाहिए जिसके सदस्य ग्रामीण विकास की पृष्ठभूमि की जानकारी तथा उसमें रुचि रखते हों और इस क्षेत्र में उन्हें शिक्षा तथा प्रशिक्षण प्राप्त हों तभी कार्यक्रमों के क्रियान्वयन से लक्ष्यों तथा उद्देश्यों की पूर्ति संभव हो सकेगी ❑

लेखकों से

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, कविता, लघुकथा आदि भेजिए। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो और उसके साथ मौलिकता का प्रमाण–पत्र संलग्न हो। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। रचनाएं संपादक, 'कुरुक्षेत्र', ग्रामीण विकास मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली–110001 के पते पर भेजें।

— सम्पादक

ग्रामीण बैंक सौंपे गये अपने दायित्वों को पूरा करें

डा0 ओम प्रकाश तोषनीवाल

राष्ट्रीय बैंकों के निजीकरण की आवाज इधर कुछ अधिक जोर–शोर से ही सुनाई दे रही है। इसका कारण भूमंडलीकरण–विश्वीकरण और उदार आर्थिक नीतियों पर चलने की देश की अपनी मजबूरी है तो दूसरी ओर इन बैंकों द्वारा समाज के प्रति सौंपे गए अपने दायित्वों के प्रति उपेक्षा भी है। इस संदर्भ में हमें फिर एक बार बैंकों के राष्ट्रीयकरण की पृष्ठभूमि पर दृष्टि डालनी होगी।

सदैव से ही बैंक राष्ट्र रूपी शरीर की रक्त शिराओं के रूप में देखे जाते रहे हैं। राष्ट्र विकास के प्रत्येक पहलू पर पूंजी की आवश्यकता पड़ती है और यह स्पष्ट है कि बैंक सर्वाधिक महत्वपूर्ण वित्तीय मध्यस्थ के रूप में काम करते आए हैं। यदि एक ओर वे जनसाधारण में बचत की आदत डालते हैं तो दूसरी ओर वे यह भी सुनिश्चित करते हैं कि इन जमा राशियों का प्रयोग अर्थ व्यवस्था के विकास के लिए किया जाए। वस्तुतः बैंक वित्तीय संसाधनों को आर्थिक उपयोग में लाने के लिए शक्तिशाली उत्प्रेरक का काम करते हैं। वाणिज्य और व्यापार के क्षेत्र में उनका योगदान सुपरिचित है। जुलाई 1969 से पूर्व तक देश में केवल भारतीय स्टेट बैंक को छोड़कर समूची बैंकिंग व्यवस्था निजी क्षेत्र के हाथों में थी। उनकी अधिकतर गतिविधियां निजी व्यक्तियों अथवा व्यक्ति समूहों के लाभ के लिए होती थीं। यद्यपि बैंकों में शहरी जनता द्वारा छोटी बचतों के रूप में बहुत बड़ी राशि जमा की जाती थी, फिर भी इस पूंजी का उपयोग बहुधा पूंजीपतियों और बड़े उद्योगों की सहायता के लिए किया जाता था। बैंकों द्वारा छोटे किसानों, ग्रामीण कारीगरों, परिवहन संचालकों और जनता के अन्य उपेक्षित समूहों की उपेक्षा की जाती थी। प्रायः सभी बैंक शहरों और कस्बों में केन्द्रित थे और उनकी शाखाएं आमतौर पर औद्योगिक तथा व्यापारिक केन्द्रों में खोली जाती थीं। चौदह प्रमुख व्यापारिक बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद इन बैंकों पर सरकार का सीधा नियन्त्रण आ जाने से इस स्थिति में व्यापक परिवर्तन हुए। राष्ट्रीकृत बैंकों के प्रमुख अधिकारियों के बीच अपनी प्रथम बैठक में तत्कालीन प्रधानमंत्री ने राष्ट्रीयकरण के उद्देश्यों की व्याख्या में कहा था "कि ऐसा करने से हम बैंकों को बड़े औद्योगिक और व्यावसायिक घरानों के हानिकर प्रभावों से अलग रख सकेंगे ताकि वे कुशल और पेशेवर बैंकरों के रूप में कार्य कर सकें। साथ ही ऐसा करके ही एक व्यवस्थित ढंग से बैंकिंग को छोटे कस्बों और गांवों में पहुंचाया जा सकेगा जो धन के अभाव में अब तक पिछड़े रहे हैं।" इसका अर्थ यह था कि देश की अर्थ व्यवस्था के उन महत्वपूर्ण सेक्टरों के विकास के लिए जिन्हें अब बैंकिंग सुविधा उपलब्ध नहीं थी या बहुत कम थी, पर्याप्त धन जुटाना था, ताकि शहरी और ग्रामीण विकास के असन्तुलन को कम करते हुए धनी और गरीब के बीच की खाई को एक सीमा तक पाटा जा सके। राष्ट्रीयकरण से पूर्व बैंकों पर सामाजिक नियन्त्रण के अन्तर्गत जो भी प्रयास हुए वे पांच लाख से अधिक गावों में रहने वाले सात करोड़ परिवारों और छोटे उद्यमियों की बदलती आवश्यकताओं को देखते हुए कम ही थे। इसी

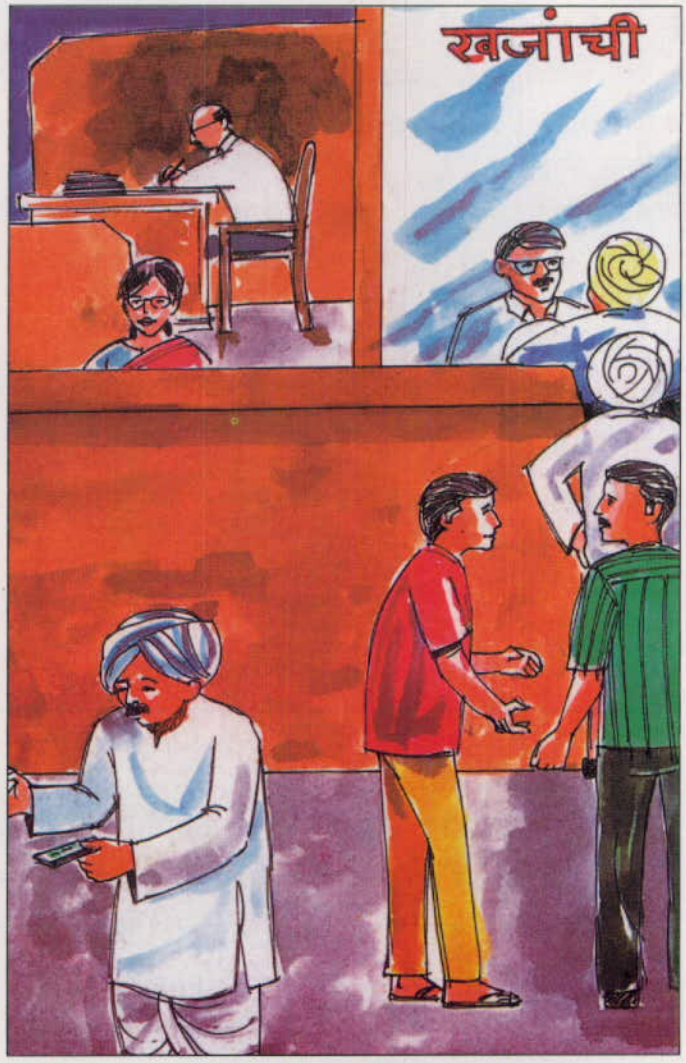

से यह सोचा और समझा गया कि बैंकों के राष्ट्रीयकरण द्वारा साख सम्बन्धी प्रगतिशील नीति पर तेजी से अमल भी किया जा सकेगा। इसमें सन्देह नहीं कि राष्ट्रीयकरण के बाद बैंकिंग सेवाओं का अद्‌भुत और अद्वितीय विकास हुआ है। नए–नए क्षेत्रों में विशेषकर सामाजिक सेवाओं के क्षेत्र में उनकी नई भूमिका पैठी है। इससे उसके उत्तरदायित्व में बढ़ोत्तरी हुई है, उसकी जोखिम की मात्रा भी बढ़ी है। बैंकों के राष्ट्रीयकरण की उपलब्धियों को उनके स्थूल रूप में तीन दिशाओं में देखा जा सकता है।: (1) बैंक शाखाओं का प्रसार, (2) जमा पूंजी में वृद्धि तथा (3) साख – सुविधा का विस्तार। राष्ट्रीयकरण के बाद बैंकों ने अपनी साख नीति में महत्वपूर्ण परिवर्तन किए हैं। नई नीति के अन्तर्गत बैंकों ने ऐसे व्यक्तियों और वर्गों के लिए, जो अब तक साख सुविधाओं के अभाव में विकास नहीं कर पाते थे, अनेक नई योजनाओं को जन्म दिया है। साथ ही उनको सुचारू रूप से चलाने के लिए अपनी कार्य–प्रणाली में भी संरचनात्मक परिवर्तन किए हैं। साख नीति में इन महत्वपूर्ण परिवर्तनों का प्रभाव यह हुआ है कि आर्थिक–सामाजिक परिवर्तन लाने की दृष्टि से कृषि, लघु उद्योग तथा आयात–निर्यात जैसे क्षेत्रों को बैंकों द्वारा अब प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र मानते हुए उनके लिए ऋण विस्तार की विशेष योजनाएं कार्यान्वित की जा रही हैं। कृषि क्षेत्र में इन बैंकों, विशेषकर ग्रामीण बैंकों, द्वारा विविध कृषिगत क्रियाओं के लिए अल्पावधि तथा दीर्घकालीन ऋणों की व्यवस्था है।

जनता के उपेक्षित वर्ग की दशा सुधारने के साथ–साथ पेशेवर उद्यमियों या छोटे–मोटे शिल्पकारों को भी अपने धन्धे चलाने के लिए ऋण दिए जाने की विशेष सुविधाए रखी गई हैं। प्रतिभाशाली छात्रों को जो पहले पूंजी के अभाव में उच्च शिक्षा से वंचित रह जाते थे, अब लगभग सभी राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा पर्याप्त साख सुविधाएं दिए जाने का प्रावधान है। इतना ही नहीं बैंक समाज की जरूरतों और कल्याण के प्रति प्रयत्नशील हैं। ये अपंगों को कृत्रिम अंगों की खरीद के लिए, स्वरोजगार के लिए ऋण देकर उनके दुख को दूर करने में मदद करते हैं। झुग्गी–झोंपड़ी वासियों की सहायता और कल्याण के लिए भी इन बैंकों के पास अपनी योजनाएं हैं। शिक्षित बेरोजगार युवकों को स्वरोजगार उपलब्ध कराने के लिए बैंकों द्वारा एकमुश्त सहायता दी जाती है। अवकाश–प्राप्त रक्षा कर्मचारियों, सेना के जवानों के लिए स्वरोजगार के तहत ऋण उपलब्ध है। एक बेहतर तथा अपेक्षाकृत अधिक स्वस्थ वातावरण में रहने के लिए प्रदूषण उन्मूलन अभियान, वृक्षारोपण अभियान, गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोगों की स्थिति सुधारने की दृष्टि से बैंकों द्वारा समय–समय पर विशेष कार्यक्रम चलाए जाते रहे हैं। महिलाओं की अर्थ–सक्षम परियोजनाओं के लिए सभी सम्भव सहायता दिए जाने के प्रावधान भी इन बैंकों के पास हैं।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था, विशेषकर भारतीय कृषि तथा ग्रामीण कुटीर और लघु उद्योगों के तीव्र विकास के लिए एम. नरसिंहम समिति की सिफारिश के आधार पर राष्ट्रपिता गांधी के जन्म दिवस पर 2 अक्तूबर 1975 को चयन किए गए कुछ ऐसे क्षेत्रों में जहां सरकारी अथवा व्यापारिक सुविधाएं बिल्कुल अपर्याप्त थीं तथा जहां कृषि विकास के लिए आशातीत सम्भावनाएं रही हैं, ग्रामीण बैंकों की स्थापना करने का शुभारम्भ हुआ। देश में सबसे पहला क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद जिलें में सिन्डीकेट बैंक के तत्वावधान में रजबपुर गांव में खोला गया। इस बैंक का उद्‌घाटन करते हुए तत्कालीन केन्द्रीय वित्त मन्त्री श्री सुब्रह्मनियम ने यह आशा व्यक्त की थी कि "बैंक लोगों के लिए होंगे न कि लोग बैंक के लिए।" उन्होंने कहा था कि ग्रामीण बैंकों का मुख्य उद्देश्य छोटे कृषकों और गरीब ग्रामीणों के ऊपर से महाजन और साहूकारों के प्रभाव को समाप्त करना है।" इन ग्रामीण बैंकों के पीछे लक्ष्य यह था कि ये बैंक केवल ग्रामीण वित्त की पूर्ति की दिशा में साख सुलभ करने के साधन मात्र ही नहीं होंगे, वरन् वे समूचे ग्रामीण जीवन के विकास के प्रहरी के रूप में कार्य करेंगे। उनसे यह आशा रखी गयी थी कि वे बैंकिंग क्रियाओं को इस प्रकार व्यवस्थित करेंगे जिससे (अ) गांव में जात–पात तथा छुआछूत के बन्धनों पर चोट पड़ सके, (आ) शादी तथा अन्य दूसरे सामाजिक अवसरों पर फिजूल खर्चों को निरुत्साहित किया जा सके, (इ) जमानत मिलते हुए भी अनुत्पादक कार्यों हेतु ऋण देने के लिए मना कर सकें तथा (ई) साहसी तथा मेहनत करने वालें लोगों को, चाहे वे जमानत न भी दे पाएं, ऋण दे सकें ताकि भाग्यवादिता की मनोवृत्ति कमजोर की जा सके। इन बैंकों से आशा यह भी रखी गई कि अपने उद्यम के लिए पूंजी चाहने वाला तो बैंक के पास पहुचेगा ही, पर बैंक को स्वयं अपने चारों ओर वहां के स्थानीय लोगों से सम्पर्क बनाए रखकर यह देखना होगा कि कौन लोग संसाधनों का प्रयोग करते हुए ऐसे बैंकों की सुविधा का लाभ उठा सकते हैं। इस प्रकार ग्रामीण बैंकों का सामाजिक दायित्व सहकारी तथा व्यापारिक बैंकों की तुलना में पर्याप्त भिन्न और विस्तृत रखा गया। इसमें सन्देह नहीं कि बैंकों ने अपनी सामाजिक जिम्मेदारियों को भली भांति समझा है। लेकिन प्रश्न तो यह है कि क्या ये बैंक अपने उन दायित्वों को भली–भांति निभा सके हैं जिनकी कि इनसे आशा रखी गई थी। क्या ये बैंक लाखों मुरझाए चेहरों पर मुसकराहट लाने और लाखों झोपड़ियों में आशा की नई किरण उत्पन्न करने में सक्षम सिद्ध हुए हैं? और यदि नहीं, जैसा कि राष्ट्रीयकरण का 30 वर्षों का इतिहास बोलता है, तो क्यो? यह प्रश्न गहरा मंथन मांगता है। इन वर्षों का अनुभव यह रहा है कि ये बैंक कमजोर वर्गों और प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों को आगे बढ़ाने में असफल रहे हैं। कृषि ऋणों के भाग को उन्नत करने और क्षेत्रीय असमानताओं को कम करने में भी ये सफल नहीं हो सके हैं और न ही दुर्बल वर्गों को पर्याप्त और वांछनीय वित्तीय सहायता ही दे पाए हैं। बैंकों की इन दुर्बलताओं के कारणों को सहज ही समझा जा सकता है।

ऋण चाहने वालों की उदासीनता

बैंकों का कार्य एक हाथ लेकर दूसरे हाथ देने का होता है। अतः ग्रामवासियों विशेषकर, निम्न और मध्यम वर्ग के लोगों को चाहिए कि वे अपनी लघु बचत को घर में न रखकर बैंकों में जमा करें। बैंकों में जितनी अधिक राशि जमा होगी जरूरतमन्द लोगों को उतना ही अधिक रुपया समय पर दिया जा सकेगा। दूसरी महत्वपूर्ण बात ऋण

के वापिस करने की है। बैंकों के पास रुपये का बहाव सदा बना रहना चाहिए। इसके लिए जहां एक ओर नए लोग ऋण की अदायगी समय पर करें। यह अदायगी बिना किसी दबाव और कानून कार्यवाही के होनी चाहिए। इसके लिए लोगों में बैंक भावना पैदा करनी होगी। आज तो गरीब और कम पढ़ा–लिखा ग्रामीण बैंक काउन्टर पर जाते हुए अपने को सर्वथा उपेक्षित महसूस करता है। आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक बैंक में एक सहायक लिपिक का ऐसा पद हो जिसका काम सभी प्रकार के ग्राहकों विशेषकर ग्रामीण तथा महिलाओं को उनके बैंक लेन–देन में सहायता करना हो।

कर्मचारियों की अकर्मण्यता

विभिन्न बैंको में एक ग्राहक की हैसियत से हमारा अनुभव यह है कि इन बैंकों के अधिकारियों और कर्मचारियों की अकर्मण्यता तथा उनके व्यवहार का रूखापन भी एक कारण रहा है जहां बैंकों की उदार ऋण नीति का लाभ समाज के निम्न वर्ग को नहीं के बराबर मिला है। पूछा जाता है कि कितने रिक्शे वालों और ऐसी ही श्रेणी में आने वाले अन्य उद्यमियों को ऐसी सुविधाएं मिली हैं कि वे अपने लड़खड़ाते पैरों पर मजबूती से खड़े हो सकें। वस्तुतः इस सम्बन्ध में इस वर्ग से ऋण वसूली की समस्या के तर्क को समझा जा सकता है, लेकिन इसका विकल्प खोजना भी तो राष्ट्रीयकृत बैंकों तथा सरकार का ही उत्तरदायित्व है। इस सम्बन्ध में बैंकों को शिक्षात्मक भूमिका का निर्वाह करना होगा। विशेषकर उन्हें छोटे–छोटे ऋण लेने वालों को यह समझाना होगा कि एक स्वीकृत ऋण सीमा का यदि यथोचित रूप में उपयोग किया जाए और यथा समय भुगतान करते रहा जाए तो यह स्वीकृत ऋण सीमा ऋणकर्ता के लिए एक नियमित वित्त पोषण का साधन बन सकती है। "बैंक से मदद लो और साधन जुटाओ" के नारे को पहले से कहीं अधिक लोकप्रिय बनाने की आवश्यकता है। वस्तुतः राष्ट्रीयकृत बैंकों के लिए यह एक चुनौती है कि वे गरीब तथा असहाय के कितने सहायक हैं। भविष्य में इसी कसौटी पर ही बदलते समय के परिप्रेक्ष्य में हम इन बैंकों के निजीकरण की आवाज को कमजोर कर सकते हैं। ❑

(पृष्ठ 2 का शेष)

पाठकों के विचार

कुरुक्षेत्र का संदेश : संघर्ष ही जीवन है

काफी इंतजार के बाद *कुरुक्षेत्र* का दिसम्बर अंक प्राप्त हुआ। सहस्राब्दी की मधुरिमा में *कुरुक्षेत्र* की पेषकष जानदार, शानदार और हर तरीके से महत्वपूर्ण लगी। विकलांगों के लिए षिक्षा आलेख बहुत अच्छा बन पड़ा है। इसके अलावा खोजपूर्ण रिपोर्ट में *ग्रामीण महिलाओं में साक्षरता, जनप्रतिनिधि समता संवर्द्धन : एक सशक्त पहल, गुम होते गांव* बहुत पसंद आए। इन सभी आलेखों ने पत्रिका के स्पष्ट और कल्याणकारी उद्देष्य को तो स्पष्ट किया ही है, साथ ही गुप्त रूप से यह संदेश भी दिया है कि संघर्ष ही जीवन है। बगैर संघर्ष और संकल्प के मंजिल पाना आसान नहीं है।

छैल बिहारी शर्मा 'इन्द्र', शिवसदन, छाता (उ.प्र.), 281401

नवीनता की ओर अग्रसर

कुरुक्षेत्र का नवम्बर 99 का अंक पिछले अंकों की अपेक्षा अत्यधिक परिष्कृत एवं बहुपक्षीय विचारों को रखने वाला तथा देष के सुदूर में हो रही ग्रामीण विकास गतिविधियों पर प्रकाष डालने वाला है। इसके अतिरिक्त स्वास्थ्य तथा स्वच्छता क्षेत्र की जानकारियां भी इसमें सम्मिलित हैं।

मुझे आषा है कि आपकी पत्रिका *'कुरुक्षेत्र'* इस प्रकार नवीनतम से नवीनतम जानकारियां उपलब्ध कराती रहेगी तथा ग्रामीण विकास में हो रही गतिविधियों को प्रकाषमान करती रहेगी।

डा. तरुण कुमार परुथी, पशु चिकित्सक,
140, वसुन्धरा एन्क्लेव, दिल्ली–110096

पृष्ठ 14 का शेष

पंचायतों के नेतृत्व में कमजोर वर्गों की जागरूकता

शुरुआत उनके लिए प्रेरक बिन्दु बने हैं जैसे–जैसे कमजोर वर्गों के भीतर चेतना का सूरज उगेगा वैसे–वैसे विकास कार्यों में उनकी भागीदारी बढ़ेगी। आवश्यकता इस बात की है कि सरकार और उनके अधिकारी उन्हें भरपूर सहयोग से समय–समय पर लाभान्वित करते रहें साथ ही उनकी सारी समस्याओं का युक्तसंगत निदान के लिए तत्पर रहें तभी पंचायतों में कमजोर वर्गों की भूमिका प्रभावशाली बन सकेगी। ❑

लगन, मेहनत और जीत*

यशोविमलानन्द

कहानी कहने की मेरी आदत बिलकुल नहीं पर लिखने की जरूर है। बचपन में अपने नाना से कहानी सुनने का बड़ा चाव था। आज से बाईस साल पहले जब मैं आठ–नौ साल का था खूब परियों की कहानी उनसे सुनता था। वह सुनने का चाव इतना बढ़ा कि कहानी कहनी तो न आई पर लिखनी जरूर आ गई। फिर कहानी लिखने की आदत कुछ ऐसी बढ़ी कि बस जो भी बात लिखनी हुई कहानी बना कर लिखने लगा। सच बात भी कहानी बनने लगी। वैसी ही एक सच बात आप के सामने भी कहानी बना कर लिख रहा हूं। चूंकि यह बात सच है, इसलिए न तो इसमें परियों को ला कर आप को कोई तिलस्मी किस्सा बता सकता हूं और न कोई बात मन से जोड़ कर उस में रस पैदा कर सकता हूं।

जी हां, तो यह कहानी एक ग्राम सेवक की ही है। एक बार किसी ब्लाक में जाने का मौका मिला। बी.डी.ओ. साहबान अक्सर बड़े–बड़े अफसरों का ही स्वागत करते हैं। यह ठीक भी है क्योंकि वह उनके काम की रिपोर्ट लिखते हैं जिससे उनका भला या बुरा हो सकता है। पर मुझ जैसा कोई मामूली आदमी जब पहुंच जाए और वह सिर्फ एक लिखाड़ी ही मान लिया जाए तो अक्सर उसके लिए लोगों के दिल में कम परवाह का रहना स्वाभाविक ही है।

उस ब्लाक के बी.डी.ओ. साहब इतने तेज मिजाज माने जाते थे कि मामूली लोगों की चिन्ता उन्हें होती भी न थी। किसी तरह एक ढाबे पर सामान पटका। ढाबेवाले को कुछ पैसे दिए। उसे भी लालच हुआ कि कोई शहरी खानेवाला फंसा। सामान पटक ब्लाक के दफ्तर पहुंचा। सब बन्द। कोई नहीं मिला। सोचा चलो खुद ही किसी गांव में चलें।

गांव पहुंचा। ग्राम सेवक से मुलाकात हुई। बिचारे से अपना किस्सा बयान किया। उसे कुछ सहानुभूति हुई। उसने झट कहीं से एक गिलास गर्म दूध मंगवाया। उसे मेरी बात–चीत में कुछ मिठास मिली और उसने अपनी गाथा बयान की। कैसे बयान की यह तो ठीक याद नहीं पर यहां से जरूर शुरू हुई।

"कहिए, कैसा लगता है आप को अपना काम?"

"काम तो बड़ा प्यारा है, पर करने को नहीं मिलता।"

"क्यों भाई?"

"काम करो तो साहब खुश नहीं।"

"भाई, साहब को तो काम से ही खुश होना चाहिए। यह कैसी उल्टी बात कह रहे हो।"

"साहब काम से नहीं खुशामद से खुश होते हैं!"

"ठीक है, खुशामद भी करो, काम भी करो।"

"पर यह दोनों एक साथ नहीं चलते।"

"फिर क्या चलता है?"

"सिर्फ खुशामद ही।"

"भाई, यह तो गलत बात है। देश का इतना बड़ा काम, राष्ट्र का इतना पैसा, यह सब तो तुमने एक ही बात में खत्म कर दिया यह तो ठीक नहीं।"

"यही तो मुश्किल है। कोई हमारी बात नहीं समझता।"

"मैं विश्वास दिलाता हूं, जरूर समझूंगा।"

"आप के अकेले समझ जाने से मेरा बनेगा भी क्या?"

"क्यों नक्कारखाने में तूती की आवाज भी तो कुछ कीमत रखती ही है?"

"जनाब ऐसी गलती भी मत करिएगा।"

"क्यों? आखिर आप इतने बिगड़ क्यों रहे हैं?"

"अगर आपने ऐसा किया तो मैं डिसमिस।"

"अच्छा भाई, मैं तुम्हारा नाम नहीं लूंगा।"

गर्ज उसे विश्वास दिलाया तब वह बोला – "हम काम करना चाहते हैं पर यह साहबियत जब तक नहीं हटती, इन्साफ का पलड़ा जब तक भारी नहीं होता, जातपात के भेद दूर नहीं होते कुछ नहीं हो सकता। चाहे कोई कितना ही सर क्यों न पटके।"

मैंने पूछा – "वही ढाक के तीन–पात रहेंगे! साहबियत क्या चीज है!" जवाब था जीप पर बैठ गांवों का मुआयना। एक दिन में पचास मील का सफर और काम के नाम पर सिर्फ झाड़–फटकार। हमारे साथ नौकरों का सलूक यह सब साहबियत नहीं तो क्या है।

दूसरा सवाल था इन्साफ के पलड़े के बारे में। यह बला भी मेरे समझ में न आई थी। जवाब मिला झूठी रिपोर्ट पर अधिक शाबाशी। दिल लगा कर मेहनत करने पर कोई सुनवाई नहीं। दिक्कतों या वक्त की मांग को न देख दिन में चन्द्रमा, रात में सूरज उगाने की सी हिदायतें।

यह समझ में आया तो तीसरी पहेली थी जात–पात के भेद की। यह तो कुछ–कुछ साफ था, कुछ और साफ हो गया। मतलब यह था कि साहब अपनी जात के आदमियों को अधिक पसन्द करते हैं।

सब का निचोड़ निकला तरक्की और शाबाशी में सच्चाई और मेहनत की नहीं खुशामद, सिफारिश और जातिवाद की जरूरत थी।

पर इन छोटी बातों से हारे हुए एक इंसान की हार से मैं हारनेवाला

* कुरुक्षेत्र फरवरी 1960 अंक से उद्धृत

इंसान कहां। मैंने कहा – "भाई, तुम्हारी हर बात मैं मानता हूं पर तुम एक बात पर विश्वास रखो – मेहनत का फल हमेशा मीठा होता है। सच्चाई हमेशा पनपती है। इन सब से बढ़ कर अगर कोई बात है तो वह यह कि हमारे दिल में भावना होनी चाहिए कि हम अपने गरीब मुल्क के लिए अपने देश की गरीब करोड़ों जनता के लिए, अपने राष्ट्र के लिए काम कर रहे हैं न कि अपने लिए। जहां हमारे में यह त्याग की भावना आ जाएगी इन चीजों का हमारे ऊपर कोई असर नहीं होगा। हमें लगन के साथ, सच्चाई के साथ अपने कर्त्तव्य को पूरा करना चाहिए। किसी एक व्यक्ति की गल्ती के कारण सम्पूर्ण राष्ट्र का नुकसान नहीं करना चाहिए।

"अगर हमारे में काम के प्रति प्यार है तो हममें एक ऐसी हिम्मत होगी जो हमें पहाड़ जैसी ताकत दे सकेगी। अगर हमें गांव के लोग प्यार करते हैं, अपना हितैषी समझते हैं तो यही हमारी सफलता है। निराश और उदासीन होने से हमें कुछ न मिलेगा। हमारा राम काम में बसता है।"

मेरी बात कुछ असर करती–सी दिखी। ग्राम सेवक बड़े गौर से सुन रहा था। उसने मुझे बीच में कहीं न टोका। मैं समझ गया वह जरूर इसमें कोई सच्चाई पा रहा है। मैंने उसके दिल को, जीतने के लिए और कहा – "मैं जानता हूं आप को सुविधाएं नहीं हैं। महान, परिवार यह सभी चिन्ताएं हैं पर यह तो सोचिए हमारे राष्ट्र नायकों को इससे भी अधिक चिन्ताएं हैं।"

उसने कहा – "आप ठीक कहते हैं। हमें सब चिन्ता छोड़ सिर्फ देश की, देश की समस्याओं की, देश की करोड़ों जनता की चिन्ता करनी चाहिए।"

आप विश्वास करें या न करें पर जैसा कि मैंने शुरू में कहा है कि मैं एक सच्ची कहानी लिख रहा हूं इसलिए न इसमें कोई प्रेमी किसी प्रेमिका के लिए जहर खा कर मरता है न कोई किसी के लिए कुर्बानी कर बैठता है। इसका अन्त सिर्फ इतना ही हुआ कि कुछ समय पहले जिस ग्राम सेवक के चेहरे पर घृणा, उदासी और निराशा के भाव दिखाई दे रहे थे उसी के चेहरे पर एक नया तेज–सा आ गया।

हां, तो कहानी यहीं खत्म होनी थी, उसके बाद मुझे अपने सामान की भी चिन्ता थी। रात तो हो ही गई थी। लौट पड़ा। रात ढाबे के बेंच पर काटी। सुबह बी.डी.ओ. साहब के बंगले पर पहुंचा। वह सचमुच अकड़ में बैठे कोई पत्रिका पढ़ रहे थे। ब्लाक का चपरासी उनके घर में झाड़ू लगा रहा था।

उन्होंने पूछा – "आप आ गए?"

मेरा जवाब था – "जी, आ गया।"

"कब आए?"

"कल आया।"

कहां रहे यह उन्होंने नहीं पूछा। जब कोई न पूछे तो अपने से बताना ठीक भी नहीं। रात को बेंच पर पीठ की काफी मरम्मत हो चुकी थी। इसलिए जल्दी विदा लेना ही उचित था। विदा ले सामान बस पर लाद चल पड़ा। मगर आज भी उस ग्राम सेवक का और उसके जैसे सैकड़ों ग्राम सेवकों के चेहरे मेरे सामने अब भी नाच रहे हैं।

हां, यह कहानी मैंने आपको सिर्फ यह बताने के लिए लिखी है कि सुना है वही ग्राम सेवक आज अपने ब्लाक का सब से अच्छा ग्राम सेवक माना जाता है। मुझे विश्वास है कि अब आप को भी मेहनत, सच्चाई, लगन और त्याग पर भरोसा होने लगा होगा।

एक और संकल्प

(पृष्ठ 24 का शेष)

– "मां पढ़ने–लिखने के लिए उम्र का कोई बंधन नहीं होता। और फिर यह भी तो सोचो तुम्हारे पढ़–लिख जाने से गांव में और कितने लोगों का भला हो सकेगा। क्या तुम नहीं चाहतीं कि जो तुम पर गुजरी वह दूसरों पर न गुजरे? तुम्हारा संकल्प अभी अधूरा है मां! सिर्फ एक राजू को पढ़ा देने से यह पूरा नहीं होगा। गांव के दूसरे बच्चे भी तो तुम्हारे राजू की ही तरह हैं न? क्या तुम नहीं चाहतीं कि उन सबकी मांएं भी एक दिन तुम्हारी ही तरह गर्व और खुशी का अनुभव कर सकें?

शारदा कुछ पल चुपचाप सोचती रही। उसकी आंखों में अपनी लाचारी का वह दृश्य घूम गया जब मास्टरनी के इंतजार में उसे घुट–घुट कर पहाड़ की तरह बड़े पूरे छः दिन काटने पड़े थे। उसने मन ही मन आज फिर एक नया संकल्प लिया। आंखें इस संकल्प की दृढ़ता से चमक उठीं–

– "हां बेटे! तू बिल्कुल ठीक कह रहा है। मैं भी पढ़ूंगी। आज से, बल्कि अभी से।"

शारदा के भीतर एक नई खुशी अंगड़ाई लेने लगी। वह उठी और झाड़–पोंछकर राजू के स्कूली दिनों की याद स्वरूप सहेज कर रखी स्लेट उठा लाई। खड़िया का काम चूना से लिया गया। राजू ने खड़िया पकड़े मां के हाथ को अपने हाथ में लेकर स्लेट पर टिका लिया। तभी पूजा घर से उन्हें शंख बजने की आवाज सुनाई पड़ी। एकादशी की उपवासी बहू पूजा कर रही थी। मां ने अपनी भर आईं आंखों को बांए हाथ से पोंछ कर मुस्करा कर राजू की ओर देखा। राजू भी प्रत्युत्तर में मुस्करा दिया। उसने खड़िया से स्लेट पर 'कुछ' खींचा और मां की ओर देख बोला –

– "बोलो..... "अ"..... ।" ❑

MAHATMA GANDHI CD

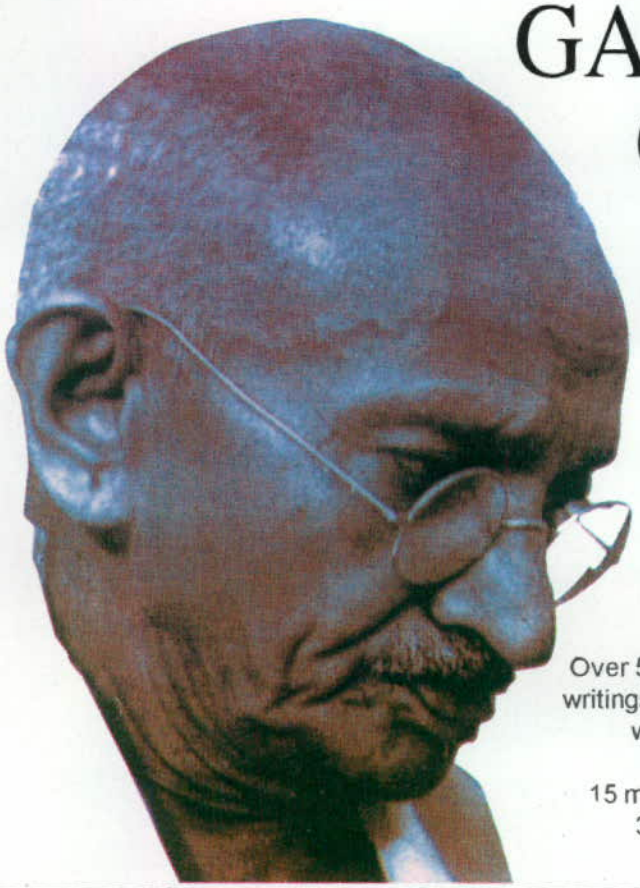

A

comprehensive
Multi-media CD
on Mahatma Gandhi.
Over 50,000 pages of Gandhiji's
writings arranged chronologically
with intensive indexing and
interactive retrieval paths.
15 minutes of Gandhiji's voice.
30 minutes of film footage.

Based on *Collected Works of Mahatma Gandhi* brought out by **Publications Division** in 100 volumes.
Price: Rs.2,500/- per CD.

For business enquiries, contact our sales outlets at:

Patiala House, Tilak Marg, **New Delhi,** Ph.3387983; Super Bazar, Connaught Circus, **New Delhi,** Ph.3313308; Hall No.196, Old Secretariat, **Delhi,** Ph.3968906; Rajaji Bhavan, Besant Nagar, **Chennai,** Ph.4917673; 8, Esplanade East, **Calcutta,** Ph.2488030; Bihar State Cooperative Bank Building, Ashoka Rajpath, **Patna,** Ph.653823; Press Road, **Thiruvananthapuram,** Ph.330650; 27/6, Ram Mohan Rai Marg, **Lucknow,** Ph.208004; Commerce House, Currimbhoy Road, Ballard Pier, **Mumbai,** Ph.2610081; State Archaeological Museum Building, Public Gardens, **Hyderabad,** Ph.236393; 1st Floor, F-Wing, Kendriya Sadan, Koramangala, **Bangalore,** Ph.5537244; CGO Bhavan, A Wing, A.B.Road, **Indore**; 80, Malviya Nagar, **Bhopal**; B-7/B Bhawani Singh Road, **Jaipur.**

आर.एन. / 708 / 57
डाक–तार पंजीकरण संख्या :डी (डी एल) 12057 / 2000
आई.एस.एस.एन. 0971–8451
पूर्व भुगतान के बिना डी.पी.एस.ओ. दिल्ली में डाक में डालने की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)–55

R.N./708/57
P&T Regd. No. D (DL) 12057/2000
ISSN 0971-8451
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at DPSO, Delhi-54

श्रीमती सुरिन्द्र कौर, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली–110001 द्वारा प्रकाशित और मुद्रित।
मुद्रकः अरावली प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू–30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया–II नई दिल्ली–20. सम्पादक : बलदेव सिंह मदान